ऋग्वेद

ओ३म्

यजुर्वेद

ऋषि बोधांक

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 20

वर्ष : 31 माघ-फाल्गुन वि0स0 2075 फरवरी 2019 अंक : 2

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

बोध स्थल

शिव मंदिर टंकारा गुजरात

महर्षि दयानन्द

इस स्थान पर महर्षि दयानन्द ने सच्चे शिव को जानने का संकल्प किया

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद

अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

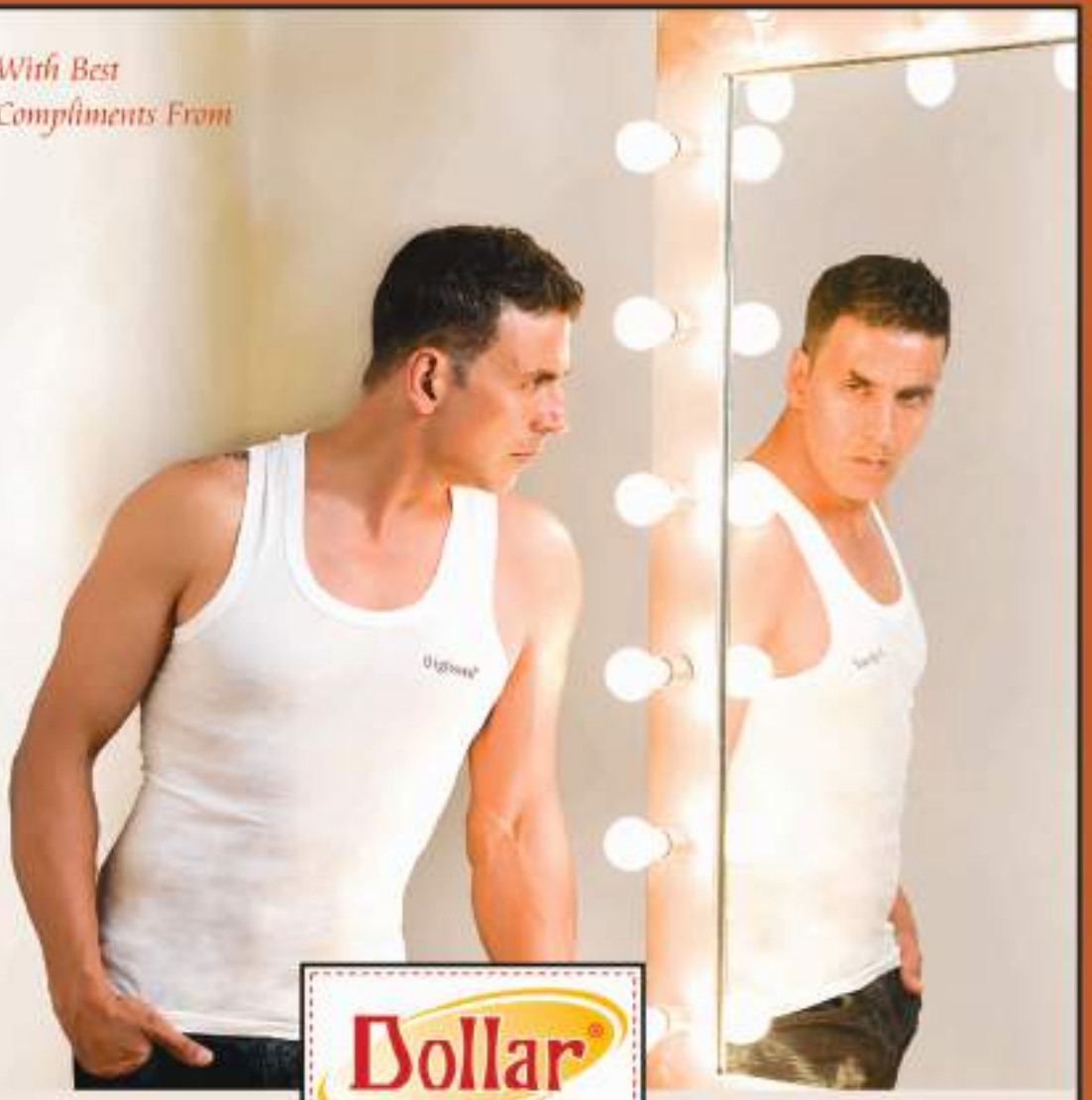

With Best
Compliments From
Dollar
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
www.dollarglobal.in Buy Online: www.dollarshoppe.in Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

ओ३म्

पवमान

वर्ष–31 अंक–2

माघ–फाल्गुन 2075 विक्रमी फरवरी 2019
सृष्टि संवत् 1,96,08,53,119 दयानन्दाब्द : 194

★

–: संरक्षक :–
स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

★

–: अध्यक्ष :–
श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री
मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–
प्रेम प्रकाश शर्मा
मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–
स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–
डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री
अवैतनिक
मो. : 9336225967

★

–: सम्पादक मण्डल :–
अवैतनिक
आचार्य आशीष दर्शनाचार्य
मनमोहन कुमार आर्य

★

–: कार्यालय :–
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,
तपोवन मार्ग, देहरादून–248008
दूरभाष : 0135–2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com
Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
सत्यान्वेषी महर्षि दयानन्द सरस्वती	डा० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	4
ऋषि दयानन्द की देन	मनमोहन कुमार आर्य	7
महर्षि दयानंद सरस्वती.....	भावेश मेरजा	11
संध्या से सम्बंधित शंकाओं का समाधान	डॉ विवेक आर्य	15
श्रद्धांजलि स्व० श्री दीपचंद आर्य	मनमोहन कुमार आर्य	17
क्या बनना चाहते हो? पुरुष या स्त्री!	महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती	20
कवि वीरेन्द्र कुमार राजपूत....	सन्त विदेह योगी, कुरुक्षेत्र	22
लाला हरदयाल	स्वामी यतीश्वरानन्द महाराज	24
भारत का सौभाग्य दुर्भाग्य में परिवर्तित	चमनलाल रामपाल	27
वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर (प्रथम स्तर)		29
योग–साधना, यजुर्वेद पारायण एवं गायत्री यज्ञ का विशेष आयोजन		30
वैदिक–गुरुकुलीय–शास्त्रीय–प्रतिस्पर्धा	शिवदेव आर्य	31

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. "वैदिक साधन आश्रम"	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000/– प्रति माह
3.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000/– प्रति माह

पवमान पत्रिका के रेट्स

1.	मासिक मूल्य (1 पत्रिका)	रु. 20/– एक प्रति
2.	वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष)	रु. 200/– वार्षिक
3.	15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य	रु. 2000/–

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

महर्षि दयानन्द द्वारा उद्घोषित राजधर्म

विद्याध्ययन समाप्त होने के बाद स्वामी विरजानन्द ने अपने शिष्य दयानन्द को अपना जीवन देश को समर्पित करते हुए दीन–दुखियों पर उपकार करने, सत् शास्त्रों का उद्धार करने, अविद्या को मिटाने और वैदिक धर्म फैलाने का आदेश दिया। अप्रैल 1867 में कुम्भ के मेले से उन्होंने समाज सुधार का कार्य आरम्भ किया। समाज में व्याप्त पाखण्ड, अन्धविश्वास, कुरीतियों, गुरुडम, आडम्बर, जातिवाद, सतीप्रथा, बालविवाह आदि कुप्रथाओं के विरुद्ध उन्होंने सारे देश के भिन्न–भिन्न स्थानों में घूम–घूम कर घोर प्रचार करते हुए आवाज बुलन्द की। अपने विचारों को महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश नामक अपने कालजयी ग्रन्थ मे उल्लिखित किया और 10 अपैल 1875 को इस उद्देश्य से आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी दयानन्द की यह एक बड़ी देन है कि भूले हुए वेदों का उन्होंने फिर से हमें परिचय कराया और वेदों के ज्ञान को समस्त विद्याओं का मूल बताया। उन्होंने न केवल वेदों का भाष्य किया अपितु ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि आदि अनेक ग्रन्थ लिखे। महर्षि के हृदय में मातृभूमि का स्थान सर्वोपरि था और देश प्रेम की भावना उनमें कूटकूट कर भरी हुई थी। उन्होंने स्वदेश, स्वसाहित्य, स्वभाषा, स्वसंस्कृति और स्वधर्म के महत्व पर अत्यन्त बल दिया। उनके द्वारा धर्म की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए पक्षपात रहित न्याय और सबका हित करना धर्म है। यह धर्म प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से सिद्ध किए जाने योग्य और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के मानने योग्य हैं। वेद में मनुष्यों के लिए करने योग्य और न करने योग्य बातों का वर्णन, ईश्वर प्राप्ति के लिए स्तुति, प्रार्थना, उपासना और मनुष्य के कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञान बीज रूप में दिया गया है, इसलिए इसके पालन में किसी को भी कोई शंका या कठिनाई नहीं होनी चाहिए। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश के छठे सम्मुलास में राजधर्म का प्रतिपादन किया है। यजुर्वेद के एक मंत्र की व्याख्या करते हुए कहा है कि राष्ट्रधर्म या राजधर्म उसे कहते हैं जिसमें राज–सभाध्यक्ष सब प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर विद्वानों को अपने साथ शासन के लिए सम्मिलित करते हुए, सेना की उचित रूप से सहायता लेते हुए और उनकी रक्षा करते हुए प्रजा का पालन करे। राजा और सभासदों को इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला, अधर्म न करने वाला और योगाभ्यासी होना चाहिए। राजा को निरंकुश, तानाशाह और वंशानुगत नहीं होना चाहिए। वह प्रजा द्वारा चुना हुआ शासक ही होना चाहिए। हमारे संविधान के अन्तर्गत वर्तमान संसदीय प्रणाली और प्रजातन्त्र के चार स्तम्भों– कार्यपालिका, संसद, न्यायपालिका और प्रेस की व्यवस्था में राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश और प्रैस का स्वतन्त्र होते हुए भी एक–दूसरे पर नियंत्रण रहता है जिससे कोई भी संस्था निरंकुश रूप से शासन नहीं कर सकती है। भारत को स्वतन्त्रता के बाद महर्षि द्वारा वेदों की ज्ञान गंगा से निकाले गये इन मोती रूपी बिन्दुओं पर सरकार द्वारा विचार करने के उपरान्त भारत को कल्याणकारी राज्य बनाने के लिए बहुत प्रयास किये जा चुके हैं और अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। बोधोत्सव हमें कर्तव्य पालन के लिए प्रेरित करता है। हम यह ऋषि–बोधांक महर्षि को कोटिशः नमन करते हुए सुधी पाठकों को समर्पित करते हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

वेदामृत

'गगन में तारे जड़नेवाला'

आ पप्रौ पार्थिवं रजो, बद्बधे रोचना दिवि।
न त्वावां इन्द्र कश्चन, न जातो न जनिश्यते ऽति विश्वं ववक्षिथ।।

ऋग्वेद 1.81.5

ऋषिः **गोतमः राहूगणः।** देवता **इन्द्रः**। **छन्दः** निचृत् पंक्तिः।।

इन्द्र परमेश्वर ने (पार्थिवं) पार्थिव (रजः) लोक को (आ पप्रौ) आपूर्ण किया है, (दिवि) द्युलोक में (रोचना) चमकीले नक्षत्रों को (बद्बधे) बांधा है, जड़ा है। (इन्द्र) हे परमेश्वर! (त्वावान्) तुझ जैसा (कश्चन) कोई भी (न) नहीं है (न जातः) न उत्पन्न हुआ है, (न जनिश्यते) न उत्पन्न होगा। तू (विश्वम् अति) विश्व को अतिक्रान्त करके (ववक्षिथ) महान् है।

हे इन्द्र! हे परममहिमाशाली परमेश्वर! तुम्हारी महत्ता का हम क्षुद्र मानव भला पार कहां पा सकते हैं? तुमने पृथिवी–लोक में एक–से–एक चामत्कारिक बहुमूल्य पदार्थ भरे हैं। मिट्टी, पानी, पवन, अग्नि जैसे छोटे प्रतीत होनेवाले पदार्थ भी हमारे लिए इतने मूल्यवान् हैं कि हम उनके बिना रह नहीं सकते। तुमने पृथिवी पर हिम–गिरियों को खड़ा किया है, सुरभित सुमनों वाले पौधों को रोपा है, उत्तम फलवाले छायादार तरुओं को उगाया है, आरोग्य–दायिनी ओषधियों और विविध अन्नों को उत्पन्न किया है, कल–कल–निनादिनी स्वच्छ–तोया नदियों को बहाया है, पर्वतों पर झर–झर झरनेवाले झरनों को झराया है। तुमने पृथिवी के गर्भ में हीरा, सोना, चांदी, लोहा आदि धातुओं को, गन्धक, नमक, कोयला आदि खनिजों को तथा पार्थिव समुद्र की सीपियों में मोतियों को भरा है। तुमने मधुर, अम्ल, कटु, कशाय आदि रसों को पैदा किया है। इस तुम्हारे पार्थिव कर्तृत्व को हम कैसे भुला सकते हैं। साथ ही तुमने अन्तरिक्ष एवं द्यु–लोक में सूर्य, चन्द्र, गृह, विद्युत आदि चमकीले पदार्थों को भी बनाया है और तुम्हीं गगन–तल में तारों को भी जड़नेवाले हो। तुमने आकाश में अपरिमित भारवाले अगणित चमकीले पिण्डों को बिना ही डोर के लटका रखा है और उनसे असीम प्रकाश चारों ओर बखेर रहे हो। हे परम कलावित्! तुम जैसा कोई कलाकार आज तक न कोई उत्पन्न हुआ है, न भविष्य में उत्पन्न होगा। भ्रान्त हैं वे लोग जो तुम जैसे अनेक देवताओं की कल्पना करके परस्पर कलह करते हैं कि हम शिव के अनुयायी हैं, हम विष्णु के उपासक हैं। वस्तुतः हे इन्द्र! तुम्हीं विभिन्न नामों को धारण करते हो। तुम्हीं ब्रह्मा हो, तुम्हीं विष्णु हो, तुम्हीं शिव हो, तुम्हीं यम हो, तुम्हीं काल हो। हे महिमामय! तुम जैसा महान, तुम जैसा विश्व–स्रष्टा, तुम जैसा विश्वभर्ता, तुम जैसा विश्वत्राता कोई नहीं है। तुम सारे जगत् को अतिक्रान्त करके महान हो।

(डॉ० रामनाथ वेदालंकार कृत वेद–मंजरी से साभार)

सत्यान्वेषी महर्षि दयानन्द सरस्वती

—डा० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

महर्षि दयानन्द के जीवन में सत्य का सर्वोपरि स्थान था क्योकि वे सत्य की खोज में ही अपना घर छोड़ कर निकले थे और जीवन पर्यन्त सत्य के साधक, शोधक और उपासक बने रहे। महर्षि के अनुसार जैसा कुछ अपने आत्मा में है और असम्भवादि दोषों से रहित करके सदा वैसा ही बोलें, उसको 'सत्यभाषण' कहते हैं। सत्पुरुष की परिभाषा करते हुए महर्षि कहते हें कि जो सत्य प्रिय धर्मात्मा विद्वान् सब के हितकारी और महाशय होते हें, वे 'सत्पुरुष' कहाते हैं। सत्पुरुषों को योग्य है कि सामने दूसरे का दोष कहना और अपना दोष सुनना, परोक्ष में दूसरे के सदा गुण कहना और दुष्टों की यह रीति है कि सम्मुख में गुण कहना और परोक्ष में दोषों का प्रकाश करना। जब तक मनुष्य दूसरे से अपने दोष नहीं कहता तब तक मनुष्य दोषों से छूटकर गुणी नहीं हो सकता है। कभी किसी की निन्दा न करे, जैसे—'गुणेषु दोषारोपणमसूया' अर्थात् .महर्षि ने सत्याऽसत्य की पांच प्रकार से परीक्षा करना बताया है— एक—जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हों, वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य हैं। दूसरा—जो, जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह सत्य और जो सृष्टिक्रम के विरुद्ध है, वह—वह असत्य है। तीसरा—'आप्त' अर्थात् जो धार्मिक विद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियों के संग उपदेश के अनुकूल हैं, वह—वह ग्राह्य और जो—जो विरुद्ध वह अग्राह्य है। चौथा—अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है, वैसे ही सर्वत्र समझ लेना कि मैं किसी को सुख वा दुःख दूंगा, तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा और पांचवां—आठों प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव। वे जीवन में सदा सत्य का ही प्रयोग करते थे इसीलिए पढाते हुए विरजानन्द उन्हें 'कालजिह्व' और 'कुलक्कर' कहा करते थे। ये उनके प्यार के नाम थे। 'कालजिह्व' का अर्थ है जिसकी जिह्वा असत्य के खण्डन और भ्रान्तिजाल के छेदन में काल के समान कार्य करे। कुलक्कर का अर्थ है खूँटा अर्थात् जो खूँटे समान दृढ़ और अविचल रहकर विपक्षी को पराभूत कर सके।

महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का प्रणयन भी सत्य का प्रकाश करने के उद्देश्य से किया था। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की भूमिका में लिखा है— "मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य—सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान् आप्तों का मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख के द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें। मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य को जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसी कोई बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है।

किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें। क्योंकि सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।''

महर्षि की दृष्टि में सत्यार्थ प्रकाशन सर्वोच्च था। भ्रान्ति निवारण पुस्तक में वे कहते हैं–''जो मैं निरानिरी संसार का ही भय करता और सर्वज्ञ परमात्मा का कुछ भी नहीं, कि जिसके अधीन मनुष्य के जीवन–मृत्यु और सुख–दुःख हैं, तो मैं ऐसे ही अनर्थक वाद–विवादों में मन देता। परन्तु क्या करूँ मैं तो अपना तन–मन–धन सब सत्य के प्रकाशार्थ समर्पण कर चुका। मुझ से खुशामद करके अब स्वार्थ का व्यवहार नहीं चल सकता, किन्तु संसार को लाभ पहुंचाना ही मुझ को चक्रवर्ती राज्य के तुल्य है।

बरेली में महर्षि द्वारा किये गये खण्डन से कमिश्नर और कलैक्टर रुष्ट थे। उस समय महर्षि लाला लक्ष्मीनारायण के पास ठहरे हुए थे। अधिकारियों ने लालाजी से कहा कि वे महर्षि को रोकें। यह बात कांपते–कांपते महर्षि तक पहुँचाई गई। उस दिन के व्याख्यान में भी सब सरकारी हाकिम आए हुए थे। महर्षि ने सत्य का महत्त्व वर्णित करते हुए कहा था–''लोग कहते हैं सत्य को प्रकट न करो, कलक्टर क्रुद्ध होगा, कमिश्नर अप्रसन्न होगा, गवर्नर पीड़ा देगा। अरे चक्रवर्ती राजा क्यों न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।'' इतना कह कर महर्षि ने एक उपनिषद् वाक्य पढ़ा जिसमें कहा गया था– 'आत्मा को कोई हथियार छेदन नहीं कर सकता, न उसे आग ही जला सकती है' और फिर गरज कर बोले– ''यह शरीर तो अनित्य है। इसकी रक्षा में प्रवृत्त होकर अधर्म करना व्यर्थ है। इसे जिस मनुष्य का जी चाहे नष्ट कर दे।'' और इसके बाद चारों ओर अपने नेत्रों की ज्योति डालकर सिंहनाद करते हुए कहा–''परन्तु मुझे वह शूरवीर दिखलाओ जो कहता हो कि वह मेरे आत्मा का नाश कर सकता है। जब तक ऐसा वीर इस संसार में नहीं दिखाई देता, तब तक मैं यह सोचने के लिए भी तैयार नहीं हूँ कि मैं सत्य को दबाऊंगा या नहीं?

सत्य को प्रतिष्ठित कर उसकी रक्षा करने के लिए महर्षि ने अनेक बार शास्त्रार्थ किये थे। उनके सत्य के प्रति अनुराग को जानने के लिए हम उनके एक प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ का उल्लेख करते हैं। काशी शास्त्रार्थ की तिथि कार्तिक शुक्ला 12 संवत् 1926 (16 नवम्बर, सन् 1869) नियत की गई थी। एक व्यक्ति श्री बलदेव प्रसाद ने स्वामीजी से कहा कि महाराज वहां बहुत भीड़ होगी। काशी गुण्डों का नगर है, यदि शास्त्रार्थ फरुखाबाद में होता तो दस–बीस मनुष्य आपके भी होते। स्वामीजी यह बात सुनकर हँसे और बोले कि योगियों का निश्चित सिद्धान्त है कि सत्य का सूर्य अन्धकार की सेना पर अकेला ही विजय पाता है। जो पक्षपात रहित होकर ईश्वराज्ञानुकूल सत्य का उपदेश करता है, उसे भय कहां? सत्य पुरुष डरकर सत्य को नहीं छिपाते। जान जाए तो जाए, परन्तु ईश्वर की आज्ञा है कि जो सत्य है, वह न जाए। हे बलदेव! क्या चिन्ता है कि मैं एक हूँ, एक ईश्वर है, एक धर्म है और कौन है? यदि उन लोगों को आना होगा तो उनकी देखी जायेगी। दयानन्द के विपक्षी अनेक थे और उनके पास प्रचुर मात्रा में धनबल और जनबल भी था परन्तु वे चिन्ताग्रस्त थे। दयानन्द अकेला होते हुए भी ईश्वर पर विश्वास, सत्य पर श्रद्धा, साहस और धैर्य से परिपूर्ण थे। शास्त्रार्थ के दिन पचास सहस्र के लगभग लोग आए थे। काशी नरेश भी पधारे थे। स्वामीजी ने पण्डित ज्योतिस्वरूप को अपने पास बिठलाया था। यह बात काशी के पण्डितों को अखरी और उन्होंने काशी नरेश को संकेतों में सूचित किया कि दयानन्द को अकेले ही हराना कठिन है, ज्योतिस्वरूप का साथ पाकर वे एक और एक ग्यारह हो जायेंगे, फिर शास्त्रार्थ में जीतना सर्वथा कठिन हो जायेगा। महाराजा ने

संकेत पाते ही पण्डित ज्योतिस्वरूप का हाथ पकड़ कर उन्हें पण्डितों के पास आगे बिठा दिया। जहां दयानन्द अकेले थे, उनके विरोध में बालशास्त्री सहित सत्ताईस पण्डित थे। पहले इधर–उधर के कई प्रश्नोत्तर हुए उसके बाद स्वामीजी ने उनसे अधर्म के लक्षण पूछे। पण्डित निरुत्तर हो गए। इसके बाद माधवाचार्य ने कुछ पुराने पत्रे निकाले और कहा कि वे वेद के पत्रे थे। उनमें प्रतिमा और मूर्ति शब्द मूर्ति के वाचक हैं। स्वामीजी ने बताया कि उन शब्दों के वे अर्थ नहीं थे। इस पर सब पण्डित चुप हो गए, तब माधवाचार्य ने कहा कि 'ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि' इस वाक्य में 'पुराणानि' शब्द पुराणों के लिए आया है। स्वामीजी ने बताया कि पुराण शब्द यहां विशेषण है, किसी पुस्तक का नाम नहीं है। माधवाचार्य तो चुप हो गए परन्तु वामनाचार्य ने दो पुराने पत्रे निकाले जो बहुत ही अस्पष्ट थे। उन्हें दिखाकर बोले कि वे वेद के पत्रे थे । उसमें लिखा था कि 'यज्ञसमाप्तौ सत्यां दशमें दिवसे पुराणपाठं शृणुयात्' इस वाक्य में पुराण शब्द विशेषण नहीं है। दयानन्द उस पत्र को देख ही रहे थे और दो मिनट का समय ही हुआ था कि विशुद्धानन्द ने कहा कि वे विलम्बित हो रहे थे। दयानन्द की पीठ पर हाथ रख कर बोले 'ओहो हार गए' अन्य सभी पण्डितों ने उनका साथ दिया और ताली बजाकर कोलाहल मचा दिया कि दयानन्द को हरा दिया है। उस समय कुछ गुण्डों ने दयानन्द के ऊपर ढेले, गोबर और मिट्टी फेंकी। इस प्रकार प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ उच्छृंकलता के साथ समाप्त हो गया। भले ही पण्डितों ने झूठी विजय का ढोल पीटा परन्तु निष्पक्ष समाचार पत्रों ने वस्तु स्थिति का सच्चा वर्णन किया था। यह था महर्षि का सत्य की रक्षा के लिए आडम्बरों के पालन कर्ताओं से संघर्ष। उन्होने सत्य की रक्षा के लिए इस प्रकार के अनेकानेक युद्ध लड़े थे।

वे सत्य के अप्रतिम अनुरागी थे। अपने आत्म चरित्र में दयानन्द लिखते है कि विचारों, कर्मों और वाणी में सत्य उनके जीवन का प्रमुख अंग था। उन्होंने अपना प्रारम्भ एक कट्टरपन्थी हिन्दू के रूप में किया था, जैसे कि हम में से अधिकांश करते हैं। उसके बाद वे एक वेदान्ती बने और अन्त में वेदों में प्रतिपादित एकेश्वरवाद के ध्वजवाही बने। वेदों में एक परमेश्वर की अवधारणा है जिसे विभिन्न नामों से सम्बोधित किया गया है। वेदों के आविर्भाव के बाद सृजित तथाकथित पवित्र साहित्य, जैसे पुराणों के घालमेल आदि की उन्होने उपेक्षा ही नहीं कटु आलोचना की जिनकी कट्टरपन्थी पण्डों, पुरोहितों आदि ने अत्यन्त प्रशंसा की थी। उनकी वेदों पर सम्पूर्ण निष्ठा थी परन्तु उन्होंने 'वेद' शब्द के मूल अर्थ और विद्या पर अत्यधिक बल दिया था। उनके अनुसार वेद ज्ञान या विज्ञान है। इस प्रकार उनके धर्म का सारभूत तत्त्व सत्य है जो ज्ञान या विज्ञान द्वारा खोजा जाता है। फिर भी सत्य की कोई अन्तिमता नहीं है और उन्होंने इसकी खोज के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं की थी। आर्यसमाज के प्रथम दो नियमों में उन्होंने परमेश्वर की संकल्पना, विशेषता और गुणों का विवरण दिया है। आर्यसमाज का चौथा नियम है– 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सदा तत्पर रहना चाहिए' और पांचवाँ नियम है–''सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिए''। इन नियमों से स्पष्ट है कि उन्होंने हमारे दायित्वों के सम्बन्ध में अत्यन्त बल देते हुए निर्देशित किया है कि हम सदा सत्य को ही स्वीकार करें और असत्य का पता लगते ही उसे त्याग दें। यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने सत्य को स्वीकार करने के दायित्व को कभी संकुचित नहीं किया। वैदिक धर्म का उच्चतम आदर्श इस नीतिवचन में निहित है–'सत्यं परमोधर्मः' अर्थात् सत्य परम धर्म है। इसलिए हमें खुले मन और हृदय से सत्य का सम्मान और पालन करना चाहिए। यह प्रेरणा महर्षि के सत्यमय जीवन से ली जा सकती है।

ऋषि दयानन्द की विश्व के सभी मनुष्यों को देन

—मनमोहन कुमार आर्य

महाभारत काल के बाद से लेकर वर्तमान समय तक यदि हम संसार के महापुरुषों पर दृष्टि डालें तो हमें ऋषि दयानन्द सबसे महान महापुरुष दिखाई देते हैं। इसका सबसे बड़ा कारण उनके द्वारा संसार के सबसे प्राचीन धर्म वेद और संस्कृति का पुनरुत्थान करना था। क्या इसकी आवश्यकता थी? इसका उत्तर है कि संसार के प्रत्येक मनुष्य अर्थात् स्त्री व पुरुष के लिये इसकी आवश्यकता तब भी थी व अब भी है और प्रलय काल तक रहेगी। सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक लगभग 1.96 अरब वर्षों तक एक मत वैदिक मत ही समस्त संसार में प्रचलित था। इसका कारण वैदिक धर्म का सत्य व ज्ञान–विज्ञान पर आधारित होना था। देश में बड़ी संख्या में ऋषि–मुनि व विद्वानों सहित ऋषियों के शिष्य होते थे जो अज्ञान को प्रश्रय नहीं लेने देते थे। महाभारत युद्ध के दुष्परिणामों में एक परिणाम यह हुआ कि ऋषि मुनियों की कमी अथवा अभाव सहित राज्य व्यवस्था क्षीणता को प्राप्त हुई। गुरुकुलों सहित विद्या के अध्ययन व अध्यापन के केन्द्र ध्वस्त हो गये। अज्ञान व अविद्या में वृद्धि होने लगी। वेद के मन्त्रों के शब्दों के पारमार्थिक अर्थ त्याग कर लौकिक व प्रकरण विरुद्ध अर्थ लिये जाने लगे जिससे अर्थ का अनर्थ होने लगा। अहिंसक यज्ञों में पशुओं की हत्या कर उनके मांस से आहुतियां दी जाने लगी। इसी प्रकार से नाना प्रकार के अन्धविश्वास एवं सामाजिक विकृतियां उत्पन्न होने लगीं जो समय के साथ वृद्धि को प्राप्त होती गयीं। कालान्तर में देश व समाज से ज्ञान व विद्या लुप्त हो गई जिसका परिणाम सामाजिक विघटन हुआ। वेदों के यथार्थ अर्थ विस्मृत व विलुप्त हो गये और उनके गलत अर्थों व किन्हीं लोगों के स्वार्थ के कारण समाज में अवतारवाद, मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, जन्मना जातिवाद आदि अनेक विकृतियां व अन्धविश्वास उत्पन्न हो गये। देश पहले छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त हुआ और बाद में यवनों का और उसके बाद अंग्रेजों का गुलाम हो गया। भारत ही नहीं महाभारत काल के बाद पूरे विश्व में भी अज्ञान का अन्धकार छा गया। इस अज्ञान की विद्यमानता में सर्वत्र अविद्या पर आधारित मत–मतान्तर उत्पन्न हुए जिन्होंने अपना प्रभाव बढ़ाने व जमाने के लिये लोगों पर अत्याचार किये जिससे संसार में अशन्ति छा गई और लोग शुभ कर्मों से वंचित होकर क्लेश व दुःखों से युक्त होते गये।

मनुष्य जाति के सौभाग्य से 12 फरवरी, सन् 1825 को गुजरात प्रान्त के मोरवी नगर के टंकारा नामक कस्बे में श्री कर्शनजी तिवारी के घर पर एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम मूलशंकर रखा गया। आगे चलकर यही बालक ऋषि दयानन्द के नाम से विख्यात हुए। 21 वर्ष पूर्ण करके 22वें वर्ष में इन्होंने सच्चे ईश्वर तथा मृत्यु की औषधि की खोज के लिये अपने पितृ घर का त्याग कर देश के योगियों व विद्वानों की शरण ली। यह देश भर में स्थान–स्थान पर घूमें और ज्ञानी व योगीजनों से विद्या एवं योग के रहस्यों को जाना व समझा। वह एक सच्चे योगी बने जो 18 घंटे तक की लगातार समाधि लगाकर ईश्वर का साक्षात्कार कर उसके

आनन्द में निमग्न रह सकते थे व रहे थे। योग की इस उपलब्धि से भी वह सन्तुष्ट नहीं हुए और विद्या वृद्धि के लिये देश भर में विचरण करते रहे। अनेक विद्वान संन्यासियों की संगति से इनको संस्कृत की आर्ष व्याकरण व विद्या के सूर्य स्वामी विरजानन्द सरस्वती का पता मिला और इन्होंने उनकी शरण में जाकर शिष्यत्व को प्राप्त किया। ढाई वर्षों में इन्होंने स्वामी विरजानन्द जी से आर्ष व्याकरण का अध्ययन पूरा किया और शास्त्रों के सभी सिद्धान्तों व मान्यताओं को भी जाना। सन् 1863 में विद्या पूरी कर स्वामी दयानन्द जी ने गुरु विरजानन्द जी से विदाई ली। गुरु दक्षिणा पर गुरु और शिष्य में संवाद हुआ जिसमें गुरु विरजानन्द जी ने स्वामी दयानन्द को अपना पूरा जीवन देश से अविद्या को दूर कर विद्या के आर्ष ग्रन्थों वेद व वेदानुकूल ऋषि ग्रन्थों को स्थापित व व्यवहारिक बनाने में लगाने की प्रेरणा की। स्वामी दयानन्द जी ने गुरु की आज्ञा व प्रेरणा को स्वीकार कर उसके अनुरूप कार्य करना आरम्भ किया जिसका परिणाम देश के सभी क्षेत्रों से सभी प्रकार की अविद्या को दूर करने के प्रयत्न के रूप में सम्मुख आया और इसका प्रभाव भी हुआ।

स्वामी जी ने वेद और समस्त ऋषिकृत वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन कर पाया कि इनमें निराकार, सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी, अनादि, नित्य, अमर ईश्वर की उपासना का विधान है। मूर्तिपूजा का वेद, किसी आर्ष ग्रन्थ व प्राचीन ग्रन्थों में विधान नहीं है। मूर्तिपूजा का आरम्भ भी बौद्धमत के कई वर्षों बाद आरम्भ हुआ। अतः स्वामी जी ने वेद और वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध देश व विश्व में प्रचलित सभी मतों की मान्यताओं व धार्मिक अनुष्ठानों पर दृष्टि डाली। उन्होंने वेद विरुद्ध मान्यताओं की तर्क, युक्ति तथा वेद प्रमाणों के आधार पर समीक्षा की और असत्य का खण्डन तथा सत्य का मण्डन किया। मूर्तिपूजा अज्ञान व अन्धविश्वास का प्रमुख आधार है। यह मनुष्य को ईश्वर के सत्यस्वरूप की उपासना से विमुख कर उसे ईश्वर के चेतनस्वरूप से सर्वथा विपरीत जड़ व निर्जीव पदार्थों की उपासना व पूजार्चना आदि मिथ्या कर्तव्यों में प्रविष्ट कराती है जिससे मनुष्य के जीवन की उन्नति न होकर उसे वेद विरुद्ध आचरण के कारण अनेक प्रकार के आध्यात्मिक लाभों से वंचित होना पड़ता है। अतः स्वामी जी ने वेद के प्रमाणों तथा युक्तियों से मूर्तिपूजा तथा सभी अवैदिक मिथ्या विश्वासों का खण्डन किया और मत–मतान्तरों के आचार्यों को शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी। इसी के अन्तर्गत 16 नवम्बर, सन् 1869 को उनका काशी के लगभग 30 विद्वानों से शास्त्रार्थ भी हुआ था। इस शास्त्रार्थ में ऋषि दयानन्द को सफलता प्राप्त हुई थी। पौराणिक विद्वान जो वेदों का प्रमाण स्वीकार करते थे, वेदों से मूर्तिपूजा का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं करा सके थे। उन्होंने अपने पक्ष को निर्बल जानकर छल व वितण्डा का सहारा लिया परन्तु शास्त्रार्थ में उपस्थित 50 हजार की श्रोतृ–मण्डली के निष्पक्ष लोगों पर यह बात अंकित हो गई कि ऋषि दयानन्द की मूर्ति पूजा के विरोध में मान्यतायें व सिद्धान्त ही सत्य हैं। इस प्रकार स्वामी जी ने ईश्वर की मिथ्या जड़ पूजा का खण्डन कर लोगों पर इसके सत्य स्वरूप को प्रकट करके इसे दूर करने का सफल प्रयास किया।

स्वामी दयानन्द जी के समय में लोग वेद विरुद्ध और तर्क युक्ति से भी असिद्ध अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, जन्मना जातिवाद, छुआछूत, ऊंच–नीच आदि

अनेकों अन्धविश्वासों व कुप्रथाओं में फंसे हुए थे। स्वामी दयानन्द जी ने इन सब सामाजिक कुप्रथाओं का खण्डन कर इन विषयों के सत्य पक्ष को प्रस्तुत कर विद्वानों व बुद्धिजीवियों को अपनी ओर आकर्षित व प्रभावित किया। स्वामी जी के प्रवचनों, शास्त्रार्थों तथा वार्तालापों से सुधीजन उनके विचारों व मान्यताओं से आकर्षित होते रहे और वह अपने मत–सम्प्रदाय की पद्धतियों को त्याग कर अपने विचारों व आचरणों में परिवर्तन करते रहे। स्वामी जी ने देश के उत्तर, पश्चिम, पूर्वी भागों में वेद व धर्म का धुआंधार प्रचार किया। इससे सारे देश में हलचल मच गई। स्वामी जी ने पहले राजकोट में आर्यसमाज स्थापित किया था। उनके वहां से चले जाने के बाद वह सक्रिय नहीं रह सका। मुम्बई के लोगों ने स्वामी जी को एक संगठन व संस्था बनाने का अनुरोध किया। स्वामी जी ने उनके अनुरोध को स्वीकार कर मुम्बई में 10 अप्रैल, 1875 को आर्यसमाज की स्थापना की जिसका उद्देश्य देश देशान्तर में वेद और वैदिक विचारधारा का प्रचार करना तथा सभी अन्धविश्वासों, कुरीतियों व मिथ्या पराम्पराओं को दूर करना था। स्वामी जी ने इसके बाद देश के अनेक भागों में आर्यसमाज की स्थापना की प्रेरणा की। देहरादून का आर्यसमाज भी उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज है। उनके जीवनकाल में ही देश भर में लगभग 100 आर्यसमाजें स्थापित हो चुकी थीं।

अन्धविश्वास, अज्ञान, कुरीतियों को दूर कर सत्य वेद मत के प्रचार व प्रसार के लिये स्वामी दयानन्द जी ने वेद व समस्त वैदिक साहित्य की मान्यताओं को अपने विश्व प्रसिद्ध संसार के सर्वोत्तम ग्रन्थ **''सत्यार्थप्रकाश''** में प्रस्तुत किया है। यह ग्रन्थ चौदह समुल्लासों में है। प्रथम दस समुल्लास में समस्त वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों को मण्डनात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है और बाद के चार सम्मुल्लासों में देश व विदेश में उत्पन्न अवैदिक व अविद्यायुक्त मतों की मिथ्या मान्यताओं की समीक्षा की है जिससे प्रबुद्ध व निष्पक्ष विद्वान सत्यासत्य का निर्णय कर सत्य को ग्रहण तथा असत्य का त्याग कर सकें। **महाभारत काल के बाद संसार के सभी लोगों को सत्य व असत्य को जानने व सत्य को अपनाने का स्वामी दयानन्द का इस जैसा कार्य विश्व में पूर्व समय में कभी देखने में नहीं आया जब किसी धर्म प्रचारक ने सत्य व असत्य की चर्चा कर सत्य को अपनाने का आग्रह किया हो।** स्वामी दयानन्द जी की सबसे बड़ी देनों में से एक देन यह भी है कि **उन्होंने सृष्टि के आरम्भ में सृष्टिकर्ता ईश्वर द्वारा प्रदत्त वेदों के ज्ञान से ही परिचित नहीं कराया अपितु वेदों के संस्कृत व हिन्दी में सत्य अर्थ व भावार्थ भी हमें प्रदान किये हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, इसे उन्होंने परम्परागत विचारों तथा तर्क व युक्ति से भी सिद्ध किया है। वेदों का ज्ञान ही मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त कराता है। वेदेतर मतों में फंस कर मनुष्य अविद्या से ग्रस्त होता है।** उसे भक्ष्य व अभक्ष्य तथा ईश्वर की सही उपासना का ज्ञान नहीं होता और उसका मानव अनमोल अमृत तुल्य जीवन नष्ट हो जाता है।

स्वामी दयानन्द जी की प्रमुख देनों में एक देन पंचमहायज्ञ विधि भी है जिसके अन्तर्गत ही सन्ध्या आती है। सन्ध्या ईश्वर का ध्यान व उपासना को कहते हैं। यह सन्ध्या की विधि भी वेदानुकूल तथा बुद्धिसंगत है जिसके परिणाम से आत्मा व मनुष्य जीवन की उन्नति होने सहित हमारा परजन्म भी सुखदायक व श्रेष्ठ मनुष्य

योनि में जन्म धारण कराने वाला बनता है। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में ईश्वर के एक सौ से अधिक नामों की व्याख्या कर हिन्दू जगत में फैले अनेक देवता व ईश्वर के सिद्धान्त को भी निर्मूल कर सभी देवताओं को एक ईश्वर के उसके गुण– कर्मानुसार नाम बताकर प्रतिपक्षियों व सभी विरोधियों की आलोचनाओं को समाप्त कर दिया। वर्णव्यवस्था का सत्यस्वरूप भी सत्यार्थ प्रकाश में दृष्टिगोचर होता है। देश की स्वतन्त्रता का सूत्र व सिद्धान्त भी स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में बताया है। उन्होंने किसी भी अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य से स्वदेशी वैदिक विद्वानों के राज्य को सर्वोत्तम व देशवासियों के लिये पूर्ण सुखदायक व उन्नति कराने वाला कहा है। सम्भवतः उनके यही विचार देश की स्वतन्त्रता के आधार बने हैं। स्वामी जी ने सत्याचरण को ही धर्म बताया है। देश व संसार में जितने भी मत–पन्थ–सम्प्रदाय हैं, जिन्हें लोग धर्म के नाम से सम्बोधित करते हैं, वह धर्म नहीं अपितु मत व पन्थ ही हैं, ऐसी उनकी तर्कपूर्ण धारणा थी।

धर्म तो संसार में केवल एक है और वह ईश्वरीय ज्ञान वेद की शिक्षा व आज्ञाओं का अनुसरण व पालन करना ही है। स्वामी दयानन्द ने स्त्री पुरुषों के प्रति भेदभाव का भी विरोध किया और बताया कि सुसंस्कृतज्ञ नारी का स्थान समाज व देश में पुरुषों से भी ऊंचा है। **वेदों व सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन करने से यह भी ज्ञात होता है कि जहां कौशल्या व देवकी जैसी नारियां तथा दशरथ, वसुदेव तथा कर्शनजी तिवारी जैसे पिता होते हैं वहीं राम, कृष्ण और दयानन्द जैसी सन्तानें होती हैं जिनसे देश, धर्म व संस्कृति गौरवान्वित होती है।** स्वामी दयानन्द जी शिक्षा व वेदाध्ययन का विधान करने सहित वैदिक शिक्षा को सबके लिये अनिवार्य भी करते हैं। वेद पढ़कर ही मनुष्य मननशील व ज्ञानशील होता है। वेद का अर्थ ही ज्ञान है। वेद ज्ञान रहित मनुष्य अज्ञानी ही कहा जा सकता है। किताबी ज्ञान से कोई विद्वान नहीं होता अपितु वेदों का अध्ययन कर वैदिक शिक्षाओं के अनुसार जीवन धारण कर ही मनुष्य सही अर्थों में मनुष्य व विद्वान होता है। वेद और ऋषि दयानन्द की विचारधारा को अपनाकर ही देश, समाज व विश्व में सुख व शान्ति हो सकती है। स्वामी जी से एक बार किसी व्यक्ति ने पूछा कि समाज व देश में पूर्ण सुख, शान्ति व उन्नति कैसे हो सकती है? इसका उत्तर उन्होंने यह कहकर दिया था कि जब सब लोगों का एक भाव, एक मत, एक सुख–दुःख होगा, सभी लोग ज्ञानी, पक्षपात रहित, स्वार्थरहित, वेदों में विश्वास रखने वाले आस्तिक होंगे तभी यह समाज, देश व विश्व सुख व शान्ति का धाम बन सकता है। स्वामी दयानन्द जी की यदि देनों पर समग्रता से विचार किया जाये तो एक पूरा ग्रन्थ बन सकता है। मनुष्य जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है जिस पर स्वामी दयानन्द जी ने विचार कर उसका वेदों के अनुसार समाधान न किया हो और जो मनुष्य व प्राणीमात्र के लिए लाभप्रद न हो। आईये, सत्यार्थप्रकाश और वेद सहित वैदिक साहित्य दर्शन, उपनिषद, प्रक्षेप रहित मनुस्मृति, रामायण एवं महाभारत आदि का अध्ययन कर हम अपनी आध्यात्मिक एवं सांसारिक उन्नति करें। इस संसार में सुख भोंगे, परजन्म में भी उन्नति कर श्रेष्ठ मनुष्य योनि व सुखों को प्राप्त हों और कर्मानुसार मोक्ष की प्राप्ति व मोक्ष के निकट पहुंच सकें। महर्षि दयानन्द ने संसार को इतना कुछ दिया है कि उतना उनके पूर्व व बाद के किसी मनुष्य या महापुरुष ने नहीं दिया है। सारा संसार उनका ऋणी है।

महर्षि दयानंद सरस्वती का वेद-विषयक दृष्टिकोण

–भावेश मेरजा, भरुच

(ऋषि–भक्त श्री भावेश मेरजा जी आर्यसमाज के प्रतिष्ठित विद्वान, लेखक, अनेक ग्रन्थों के अनुवादक व सम्पादक सहित हिन्दी, अंग्रेजी तथा गुजराती भाषा के भी विद्वान है। इन तीनों ही भाषाओं में आपने लेखन व सम्पादन आदि का कार्य किया है। आपके लेख निरन्तर फेसबुक तथा आर्य जगत् की पत्र पत्रिकाओं में पढ़ने को मिलते हैं। आप फेसबुक तथा आर्य पत्रिकाओं में प्रकाशित सिद्धान्त व प्रमाण विरुद्ध वक्तव्यों वा लेखों पर भी दृष्टि रखते हैं और उसके वक्ताओं व लेखकों से सम्पर्क कर भूल सुधार करने का निवेदन करते हैं। श्री भावेश जी का पैतृक निवास ऋषि जन्म भूमि टंकारा की सीमा पर स्थिति एक ग्राम में है। प्रस्तुत लेख में विद्वान लेखक ने ऋषि दयानन्द सरस्वती जी के वेद विषयक विचारों को बहुत परिश्रम एवं योग्यतापूर्वक प्रस्तुत किया है। –सम्पादक)

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानंद सरस्वती (१८२५–१८८३) ने वर्तमान युग में वेदों के संबंध में कई मूलभूत बातों की ओर संसार का ध्यान आकर्षित किया है। जैसे कि–

१. ऋक्, यजुः, साम और अथर्व – ये चार मंत्र संहिताएं ही 'वेद' हैं। यह चार मंत्र संहिताएं ही ईश्वर–प्रणीत अथवा अपौरुषेय ज्ञान–पुस्तकें हैं। इन चार के अतिरिक्त जो भी पुस्तकें हैं – मान्य या अमान्य, वे सब मनुष्यों द्वारा रचित अर्थात् पौरुषेय हैं।

२. वेदों में ज्ञान, विज्ञान, कर्म और उपासना – इन चार विषयों का अथवा ईश्वर, जीव और प्रकृति (तथा प्रकृति से उत्पन्न सृष्टि) के संबंध में निर्भ्रान्त ज्ञान वर्णित है। वेद–ज्ञान की सहायता से मनुष्य अपने जीवन के चरम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

३. वेदों में किसी राजा, प्रजा, देश, व्यक्ति आदि का कुछ भी इतिहास नहीं है। वेद तो सृष्टि के आरंभ में प्रकाशित हुए हैं। उनमें किसी मनुष्य का इतिहास नहीं है। मनुष्यों ने वेदाविर्भाव के पश्चात् अपनी आवश्यकता अनुसार व्यक्तिओं, देशों, पर्वतों, नदियों तथा समुद्रों आदि के नाम वेदों के शब्दों के आधार पर निश्चित किए हैं। वेदों के शब्दों के आधार पर नाम रखने की यह परंपरा आज पर्यंत चली आ रही है। परंतु इससे वेदों में इन नामों वाले व्यक्तियों का इतिहास वर्णित है, ऐसा मान लेना तो बिलकुल ही अयोग्य समझा जाएगा। वेदों में मानवीय अनित्य इतिहास का नितान्त अभाव है। हां, सृष्टि की रचना कैसे होती है, प्रथम क्या बनता है, बाद में क्या बनता है, इसका चक्र कैसे चलता है, किन नियमों से सृष्टि चलती है, इत्यादि प्रश्नों के वैज्ञानिक समाधान के रूप में सृष्टि का नित्य इतिहास तो वेदों में है, परंतु उनमें किसी प्रकार का अनित्य मानवीय इतिहास बिल्कुल नहीं है। समस्त वैदिक साहित्य इस बात को प्रमाणित करता है कि वेदों में किसी भी देश, समाज या व्यक्ति का

इतिहास नहीं है। इसलिए वे लोग जो वेदों में मानवीय इतिहास की कड़ियाँ या संकेत ढूंढने में विश्वास रखते हैं और इसी हेतु से कार्यरत हैं, वे वास्तव में वेदों के यथार्थ स्वरूप को समझने में भारी भूल कर रहे हैं।

४. वेदों में तीन पदार्थ अनादि, अनुत्पन्न, नित्य स्वीकार किए गए हैं – ईश्वर, जीव और प्रकृति। इन तीनों पदार्थों की सत्ता सदैव बनी ही रहती है। इसलिए उनका कभी भी अभाव नहीं होता है। ये तीनों सत्ताएं अनादि हैं, वे कभी भी उत्पन्न नहीं होतीं हैं। ये तीनों तो बस ऐसे ही सदा से हैं और आगे भी सदैव बनी रहेंगी। ये तीनों सत्ताएं अनादि–अनंत काल से अपना अस्तित्व रखती आयी हैं और अनंत काल तक ऐसे ही विद्यमान रहने वाली हैं। उनका कभी भी अभाव होने वाला नहीं है। इसके अतिरिक्त, ये तीनों सत्ताएं एक में से दूसरी ऐसे परिवर्तित भी कभी नहीं होती हैं। अर्थात् ईश्वर कभी जीव या प्रकृति नहीं बनता है; जीव कभी ईश्वर या प्रकृति नहीं बनता है; और प्रकृति कभी ईश्वर या जीव नहीं बनती है। ये तीनों सत्ताएं अपने–अपने स्वाभाविक गुणों के आधार पर एक–दूसरे से सदैव भिन्न ही बनी रहती हैं; कभी भी अभिन्न – समान – एक नहीं हो जातीं। ईश्वर और जीव चेतन हैं, जबकि प्रकृति जड़ है। ईश्वर जीवों के कल्याण के लिए – उनकों उन्नति का – मोक्ष–प्राप्ति का अवसर प्रदान करने के लिए प्रकृति में से सृष्टि बनाता है। यह सृष्टि आज पर्यंत अनंत बार बनी–बिगड़ी है, और भविष्य में भी अनंत बार बनने–बिगड़ने वाली है। सृष्टि–प्रलय का यह क्रम भी अनंत है।

५. वेदों में मनुष्य के चरम विकास एवं उन्नति के लिए अपेक्षित समस्त ज्ञान वर्णित है। वेदों में सर्व प्रकार का ज्ञान–विज्ञान निहित है। वेदों में ईश्वर–प्राप्ति अथवा मोक्ष–प्राप्ति को मानव जीवन का चरम लक्ष्य बताया गया है। वेदों का प्रधान विषय यही अध्यात्म विज्ञान है। वेदों में भौतिक जीवन के प्रति भी अनादर के भाव नहीं हैं, उसके उत्कर्ष के लिए भी पर्याप्त सामग्री वेदों में उपलब्ध है; फिर भी आध्यात्मिक ऐश्वर्य की तुलना में भौतिक ऐश्वर्य को गौण जरूर बताया गया है।

६. वेद जगत् को वास्तविक एवं सप्रयोजन मानते हैं। जगत् को स्वप्नवत् मिथ्या मानते हुए अपने शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अभ्युदय की प्राप्ति के लिए बिल्कुल कामना या यत्न ही न करना – इस प्रकार के निराशावादी चिंतन का वेदों में अभाव है। वेद हमें ज्ञान– कर्म– उपासनामय कर्मठ जीवन के पाठ पढ़ाते हैं।

७. वेदों में विशुद्ध एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया गया है। एक ही सच्चिदानंद– स्वरूप, सर्वव्यापक, निराकार, अनंत, सर्वशक्तिमान, चेतन ईश्वर के गुण–कर्म– स्वभाव का ज्ञान कराने के लिए वेदों में उसकी अनेकानेक नामों से स्तुति– यथार्थ वर्णन किया गया है। इसलिए वेदों में ईश्वर के लिए प्रयुक्त इन्द्र, वरुण, प्रजापति, सविता, विधाता, अग्नि, गणपति इत्यादि नामों को देखकर ऐसा निष्कर्ष निकाल लेना कि वेदों में तो अनेक ईश्वर की स्तुति है, वेद तो बहुदेवतावादी हैं, एक गंभीर भूल ही मानी जाएगी। वेद एक ही ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना–उपासना करने की शिक्षा देते हैं।

८. वेद मानवोपयोगी समस्त विद्याओं के मूल हैं। वेदों में मानव जीवन के सभी अंगो के विषय में – व्यष्टि एवं समष्टि दोनों के विषय में ज्ञान प्रस्तुत किया गया है। वेदों में भौतिक

विज्ञान के रहस्य भी उपलब्ध हैं, परंतु वेदों में ये सब विद्याएं मूलवत् अर्थात् बीज या सूत्र रूप में वर्णित हैं। वेदों में किसी 'शास्त्र' के रूप में अमुक विद्या या विज्ञान–शाखा का सांगोपांग विस्तार या विशद विवेचन प्रस्तुत नहीं किया गया है। परंतु वेदों में से भौतिक जगत् विषयक संकेतों को ठीक से समझ कर उनके अवलंबन से सृष्टि का गहन वैज्ञानिक अध्ययन करके मनुष्य भौतिक जगत् की भी अनेक सच्चाइयों का अन्वेषण कर सकते हैं।

९. वेदों में यज्ञ, संस्कार आदि कर्मकांड का भी यथोचित वर्णन किया गया है। वेदों में वेदार्थ आधारित सार्थक एवं वैज्ञानिक कर्मकांड को समुचित स्थान दिया गया है। वेदों में 'यज्ञ' शब्द को अत्यंत विस्तृत अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, जिसकी अर्थ–परिधि में उन सभी प्रकार के उत्तम कर्मों का समावेश हो जाता है, जो किसी सद्भावना से प्रेरित होकर किए जाते हैं और जिनके द्वारा सुखों की वृद्धि और दुःखो तथा क्लेशों का शमन होता हैं। फिर भी यह नहीं भूलना चाहिए कि वेद केवल द्रव्यमय यज्ञों या कर्मकांड के लिए ही प्रवृत्त नहीं हुए हैं। वेद ज्ञान के – सत्य विद्याओं के ग्रंथ हैं; ये याज्ञिक कर्मकांड के ही या मानवीय अनित्य इतिहास के ग्रंथ नहीं हैं। कर्मकांड में भी जो विनियोग होता है वह मंत्र के अर्थ के आधीन होना अपेक्षित है।

१०. वेद और सृष्टि दोनों ईश्वरीय हैं। जैसे वेद ईश्वर–प्रणीत हैं, ईश्वरीय ज्ञान के ग्रंथ हैं, वैसे ही यह सृष्टि अथवा जगत् भी उसी ईश्वर द्वारा रचित एवं संचालित है। इसलिए इन दोनों में अर्थात् वेद तथा सृष्टि में अ–विरोध है, दोनों में पूरी संगति है, पक्का समन्वय है। सृष्टि विषयक जो बातें वेदों में वर्णित हैं, वही बातें हमें सृष्टि में उपस्थित व कार्यरत दिखाई पड़ती हैं। इसलिए वेद सर्वथा वैज्ञानिक हैं। वेदों में ऐसी एक भी बात नहीं है, जो सृष्टिक्रम के विरुद्ध हो या जिसका सृष्टि–विज्ञान से मेल न बैठता हो। इस तरह वेदों की रचना बुद्धिपूर्वक– ज्ञान– विज्ञानपूर्वक है, जो उनका ईश्वरीय होना सिद्ध करता है।

११. वेदों में मानव समाज का ब्राह्मण आदि चार वर्णों में विभाजन किया गया है; परंतु इस विभाजन का आधार व्यक्ति का जन्म नहीं, बल्कि उसके गुण–कर्म–स्वभाव हैं। जन्म आधारित जाति प्रथा न केवल वेदबाह्य है, बल्कि वेद–विरुद्ध भी है।

१२. वेदों को यथार्थ रूप में समझने के लिए ब्राह्मण–ग्रंथ, वेदांग, उपांग, उपवेद, दर्शन, उपनिषद् तथा मनुस्मृति आदि पुरातन वैदिक ग्रंथो का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। पाणिनि मुनि कृत अष्टाध्यायी, पतंजलि मुनि कृत महाभाष्य तथा यास्क मुनि कृत निरुक्त तथा निघंटु के अध्ययन से वेदों की भाषा तथा वेदों के अर्थ समझने में अनन्य सहायता प्राप्त हो सकती है।

१३. वेदों की शिक्षाएं – उपदेश सर्वथा उदात्त, सार्वभौम, सर्वजनोपयोगी और प्राणीमात्र के लिए हितकारी हैं। वेद मानवमात्र का ही नहीं, जीवमात्र का हित करने वाली बातों का उपदेश करते हैं। वेदों में जिसे संकीर्ण, एकांगी या सांप्रदायिक कहा जा सके ऐसा कुछ भी नहीं है। सभी का कल्याण और सर्वविध उन्नति कराने वाली सुभद्र बातों को प्रकाशित करने वाले वेद वैश्विक धर्म के प्रतिनिधि हैं। वेदों में उन समस्त विषयों का उल्लेख पाया जाता है, जिनका स्वीकार व आचरण कर कोई भी देश, समाज या व्यक्ति उन्नति के शिखर पर पहुंच सकता है और

सभी लोग विश्व, देश, समाज या परिवार में सुख एवं शांतिपूर्वक रहकर जीवन व्यतीत कर सकते हैं। मनुष्यों को आज पर्यंत जिन–जिन सत्य विद्याओं की आवश्यकता अनुभव हुई है और भविष्य में उन्हें जिन–जिन सत्य विद्याओं की आवश्यकता अनुभव होगी, उन सब सत्य विद्याओं का बीज रूप में समावेश वेदों में हुआ है।

१४. वेद ईश्वरीय ज्ञान है। अतः उन पर मानवमात्र का समान मौलिक अधिकार है। किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि वह अन्य किसी को उसके वेदाधिकार से वंचित कर सके।

१५. मनुष्य के आत्मा में अपना जीवस्थ स्वाभाविक ज्ञान तो होता ही है, परंतु वह इतना अल्प होता है कि केवल उससे वह उन्नति नहीं कर सकता है। उन्नति तो होती है – नैमित्तिक ज्ञान से जिसे अर्जित या प्राप्त किया जाता है। वेद ईश्वर–प्रदत्त नैमित्तिक ज्ञान है। वह सर्वज्ञ ईश्वर का ज्ञान होने से निर्भ्रांत है और इसीलिए 'परम–प्रमाण' अथवा 'स्वतः–प्रमाण' है। वह सूर्य अथवा प्रदीप के समान स्वयं प्रमाणरूप है। उसके प्रमाण होने के लिए अन्य ग्रंथों की अपेक्षा नहीं होती है। चार वेदों के अतिरिक्त समस्त वैदिक अथवा वेदानुकूल साहित्य अति महत्त्वपूर्ण होते हुए भी मानवीय – पौरुषेय होने के कारण परत–प्रमाण है। इन ग्रंथों में जो कुछ वेदानुकूल है वह प्रमाण और ग्राह्य है, और जो कुछ वेदविरुद्ध है वह अप्रमाण और अग्राह्य है।

१६. वेदों के समस्त शब्द यौगिक या योगरूढ हैं, इसलिए वे आख्यातज हैं; रूढ या यदृच्छारूप नहीं हैं। इसलिए वैदिक शब्दों का तात्पर्य जानने के लिए व्याकरणशास्त्र के अनुसार यथायोग्य धातु–प्रत्यय संबंध पूर्वक अर्थ समझने का प्रयत्न करना चाहिए। धातुएं अनेकार्थक होने से मंत्र भी अनेकार्थक होते हैं और उनके आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक अर्थ किए जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में – प्रकरण आदि का विचार करके वेदमंत्रों के पारमार्थिक तथा व्यावहारिक दोनों प्रकार के अर्थ करने का प्रयास करना चाहिए।

१७. पिछली दो शताब्दियों में पश्चिम के अनेक विद्वानों ने वेदों पर कार्य किया है और तत्संबंधी ग्रंथ आदि भी लिखे हैं, जिनमें मेक्समूलर, मोनियर विलियम्स, ग्रिफिथ इत्यादि के नाम प्रसिद्ध हैं। ये पाश्चात्य विद्वान् वेदों को वास्तविक रूप में प्रस्तुत नहीं कर सके हैं; क्योंकि एक तो वे वेद तथा वेदार्थ की पुरातन आर्ष परंपरा से अपरिचित थे और दूसरा यह कि वे लोग अपने ईसाई मत के प्रति आग्रह रखते थे और विकासवाद को अंतिम सत्य मानकर चलते थे। इसलिए पाश्चात्यों का वेद विषयक कार्य प्रायः वेदों की प्रतिष्ठा को हानि पहुंचाने वाला ही सिद्ध हुआ है। इसी प्रकार सायण, महीधर आदि मध्ययुगीन भारतीय पंडित भी अपनी कुछ गंभीर मिथ्या धारणाओं के कारण वेदों की यथार्थ रूप में व्याख्या करने में असफल रहे हैं।

१८. वेदों में सत्य में श्रद्धा और असत्य में अश्रद्धा रखने की प्रेरणा दी गई है। वेद हमें विद्या की वृद्धि और अविद्या का नाश करने के लिए तथा वैज्ञानिक चिंतन को जाग्रत करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। मूर्तिपूजा, अवतारवाद, अद्वैतवाद, पैगंबरवाद, मृतक–श्राद्ध, फलित ज्योतिष, जन्म आधारित जातिप्रथा, चमत्कारवाद, नास्तिकवाद इत्यादि वेदविरुद्ध होने से खंडनीय एवं त्याज्य हैं।

संध्या से सम्बंधित कुछ शंकाओं का समाधान

–डॉ विवेक आर्य, शिशुरोग विशेषज्ञ, नई दिल्ली

(डॉ. विवेक आर्य ऋषि–भक्त तथा आर्यसमाज के लिये सर्वात्मा समर्पित युवा विद्वान है। आप प्रभावशाली वक्ता हैं। देश, वैदिक धर्म तथा वैदिक संस्कृति की रक्षा व प्रचार के लिये आप अपने जीवन का अधिकांश समय देते हैं। देश भर में होने वाले प्रायः सभी पुस्तक मेलों में आप दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के सहयोग से आर्यसमाज के साहित्य का स्टाल लगवाते हैं। देहरादून में विगत दो बार लगे पुस्तक मेलों में भी आपके द्वारा स्टाल लगवाया गया था। आप फेस बुक, व्हटशप तथा इमेल आदि पर भी प्रतिदिन आर्यसमाज व देशोत्थान विषयक सामग्री प्रस्तुत करते रहते हैं। कुछ पुस्तकें भी आपने लिखी हैं। अनेक आर्यसमाजों द्वारा आप सम्मानित भी हुए हैं। आप जो कार्य कर रहे हैं वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। –सम्पादक)

शंका– मनुष्य ईश्वर की स्तुति क्यों करता है?

समाधान– ईश्वर किसी मनुष्य से किसी भी प्रकार की खुशामद की अपेक्षा नहीं करते और न ही स्तुति से प्रसन्न होकर पाप क्षमा कर देते हैं। मनुष्य के शुभ–अशुभ कर्मों के संस्कार उसके अंतःकरण पर अवश्य पड़ते है। अंतःकरण के पट पर निरंतर एकत्र हो रहे यही संस्कार मनुष्य के स्वभाव का निर्माण करते हैं। पुण्य संस्कारों का परिणाम पुण्य स्वभाव है और पापी संस्कारों का परिणाम पापी संस्कार हैं। पापी स्वभाव में परिवर्तन करना सहज नहीं होता। इसलिए पापी स्वभाव हो जाने पर व्यक्ति न चाहने पर भी पाप और प्रलोभनों से निरंतर परास्त होता है। इन निरंतर पराजयों से आत्मा मलिन, बलहीन एवं जीवन आशाहीन हो जाता हैं। संध्या सरोवर में नित्य स्नान करने से पूर्व संचित पाप–संस्कार धुल जाते हैं। मनुष्य की आत्मा निर्मल, पवित्र एवं बलशाली बन जाती हैं। महर्षि मनु (2/102) के अनुसार प्रातः की संध्या से दिन के और सायं की संध्या से रात्रि भर के कुसंस्कार रूपी मल नष्ट हो जाते हैं। संध्या में साधक आत्मनिरीक्षण से अपने जीवन में विद्यमान दोषों को पश्चाताप से शुद्ध करता है एवं तत्पश्चात संकल्प से अनागत पापों की प्रवृति का दलन किया जाता है। ईश्वर की स्तुति से आत्मा विनम्र हो जाता है, अहंकार का नाश हो जाता है। ईश्वर की स्तुति से मनुष्य में ईश्वर के समान श्रेष्ठ गुण जैसे दया, न्यायप्रियता आदि में निरंतर उन्नति भी होती हैं।

शंका– संध्या करते हुए मन एकाग्र न होने का क्या कारण है?

समाधान– प्रारंभिक अवस्था में जब संध्या करना आरम्भ करते है तब उसमें मन एकाग्र नहीं हो पाता। चार घड़ी भी चित्त को शांत कर बैठना असंभव लगता है। संध्या का अर्थ है सम्यक् ध्यान, परन्तु जब बैठो तो मन संसार के विभिन्न अनुभवों, वार्तालापों की सैर करने चल

देता हैं। सभी पिछली बातें स्मरण होने लगती हैं एवं चिंताएँ आ घेरती है। संध्या छूट जाती है। इसका प्रमुख कारण संध्या के मन्त्रों के गूढ़ भाव का ज्ञान न होना है अर्थात हमने संध्या को अर्थ सहित कभी समझा ही नहीं है। मन्त्रों के अर्थ में छुपी हुई गूढ़ भावना पर चिंतन करने से मन लगता है। चिंतन करने के लिए संध्या के मन्त्रों के एक एक शब्द के अर्थ को समझना चाहिए। मन्त्रों के सौंदर्य, माधुर्य और भावगाम्भीर्य को समझकर उसे स्मरण करना चाहिए। इन मन्त्रों के अर्थ में निहित भावनाओं में धीरे धीरे मन एकाग्र होने लगता है। चित शांत होने लगता है, चंचलता कम होने लगती है, चिंताएं दूर भागने लगती हैं और अंतःकरण में अवर्णनीय आनंद की अनुभूति होने लगती है। धीरे धीरे संध्या साधक के मन का अंग बन जाती है और संध्या में मन न लगने की दुविधा सदा के लिए दूर हो जाती है। यह फल केवल निरंतर प्रयास से ही सम्भव है। अतः सन्ध्या में पुरुषार्थ करते रहे। सफलता अवश्य मिलेगी।

शंका– क्या केवल संस्कृत की वैदिक संध्या से ही आत्मा का कल्याण संभव हैं?

समाधान–पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार के शब्दों में 'परमेश्वर का भजन संस्कृत भाषा में ही हो सकता है, अन्य भाषा में नहीं, ईश्वर कहकर पुकारने से वह अधिक प्रसन्न होता है किन्तु सच्चे हृदय से अल्लाह कहने से वह नाराज होता है, यह समझना भूल है।' प्रश्न उठता है कि ऋषि दयानंद जी ने पंचमहायज्ञ विधि में जो संध्या विधि लिखी है, उसी के ही द्वारा ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना व ध्यान क्यों किया जाये? इसका उत्तर यह है कि ध्यान करते हुए जो विघ्न उपस्थित होते है, ध्यान करने वालो को जिन–जिन समस्याओं से गुजरना पड़ता है, ध्यान के लिए योग के जो आठ अंग हैं, उन सबका ऐसा सुसंगत समावेश इससे अधिक मार्मिक तथा भावपूर्ण शब्दों में अन्यंत्र नहीं मिलता। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि अन्य मार्ग से सन्ध्या, भजन व उपासना नहीं हो सकती। एक स्वस्थ शरीर वाले मनुष्य के लिए किस प्रकार का भोजन अपेक्षित है? इसका वैज्ञानिक रीति से विचार करने पर यह तथ्य प्रकट होता है कि एक चतुर वैद्य जो भोजन पत्र तैयार करते है, उसके अनुसार एक व्यायाम करने वाले मनुष्य का शरीर तीव्रता से उन्नति करता हैं। व्यायाम करने वाला मनुष्य यदि साधारण भोजन ही करे तो उससे उसका शरीर पुष्टि देने वाले पर्याप्त पदार्थ प्राप्त कर लेता है। अतः लोग किसी देश, काल अथवा भाषा में सन्ध्या–भजन करें, उनकी आत्मा बलवान होकर अपने तथा समाज के बन्धुओं के दुःख निवारण में भी समर्थ व कृतकार्य होती है। ऋषि दयानन्द ने सन्ध्या की पद्धति ठीक क्रम से बनाई है, अतः यह शीघ्र फलदायक होती है।

'वधू चाहिये'

आर्य परिवार, क्षत्रिय वर्ण, 34 वर्षीय/कद 5'4'', एम.काम. एम.बी.ए., शाकाहारी, गेहूवां रंग, पीएनबी बैंक अधिकारी, पिता केन्द्र सरकार की सेवा से सेवानिवृत्त प्रथम श्रेणी अधिकारी के लिये सुन्दर, सुशिक्षित एवं सुयोग्य वधु चाहिये। देहरादून निवासी परिवार की कार्यरत कन्या को प्राथमिकता। जाति बन्धन नहीं। सम्पर्क सूत्र : 9412985121

श्रद्धांजलि

यज्ञप्रेमी ऋषिभक्त दीपचन्द आर्य, कीरतपुर (बिजनौर)

–मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज में ऐसी बहुत सी विभूतियां हुई हैं जिन्होंने अपने पवित्र जीवन व सद्कर्मों से आर्यसमाज के नाम और यश को न केवल बढ़ाया ही है अपितु जिन्होंने अपनी पवित्र कमाई से आर्यसमाज के गुरुकुल व अन्य संस्थाओं का पोषण भी किया है। ऐसे बहुत से परिवार हैं जिनके वंशवद् भी अपने पिता व पूवर्जों के यश को दान व सुकर्मों आदि से बढ़ा रहे हैं। ऐसे ही कुछ सत्पुरुषों में हमें एक नाम महात्मा दीपचन्द आर्य, कीरतपुर का भी दृष्टिगोचर होता है। महात्मा दीपचन्द आर्य जी ऋषि दयानन्द, आर्यसमाज और वैदिक सिद्धान्तों के अनन्य भक्त व निष्ठावान अनुयायी होने के साथ उन पर चलने वाले थे। आपने वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार पवित्र जीवन तो जीया ही, इसके साथ ही आपने व्यापार में सफलता प्राप्त कर अपने पुरुषार्थ से अर्जित धन से आर्यसमाज की संस्थाओं गुरुकुल नजीबाबाद, वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक, वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून सहित अनेक आर्यसमाजों व शिक्षण संस्थाओं को दान आदि देकर उनका पोषण भी किया है।

ऋषिभक्त दीपचन्द आर्य जी के नाम से प्रसिद्ध इस यज्ञ व धर्म प्रेमी पवित्र आत्मा का जन्म 17 मई, 1927 को हरयाणा के जिन्द जिले के एक गांव मिर्चपुर में हुआ था। आप आर्यसमाज और ऋषिभक्त विद्वान महात्मा प्रभु आश्रित जी के सम्पर्क में आये जिन्होंने यज्ञ व अग्निहोत्र सहित गायत्री जप आदि कार्यों में आपकी रुचि व प्रवृत्ति उत्पन्न की। आपने वैदिक सिद्धान्तों

सहित वैदिक मर्यादाओं का पालन करते हुए गृहस्थ जीवन बिताया और आध्यात्मिक एवं भौतिक सभी प्रकार की सफलतायें प्राप्त करने के साथ प्रभूत यश व कीर्ति भी अर्जित की। दिनांक 19 दिसम्बर, 2018 को उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत बिजनौर के एक कस्बे कीरतपुर में, जो आपकी सन् 1964 से कर्मभूमि रही है, वहां लगभग 91 वर्ष की आयु में आपका दुःखद देहावसान हुआ। आपने जीवन में वैदिक धर्म के पालन सहित यज्ञ एवं जप आदि की जो कठिन व असम्भव सी साधनायें की हैं, उससे निश्चय ही आप मोक्ष प्राप्ति के अधिकारी बने हैं। हम अपने जीवन व पाठकों को वेद पर चलने की प्रेरणा देने के लिये आपके जीवन की कुछ घटनाओं, उनके कार्यों व साधनाओं पर दृष्टिपात कर रहे हैं जिससे हम सबमें भी वह गुण उत्पन्न हो सकें जो महात्मा दीपचन्द आर्य जी में थे। इससे हम अनुमान करते हैं कि हमारा इस संसार में आना लाभप्रद हो सकेगा।

महात्मा दीपचन्द आर्य जी ने अपने गांव में कक्षा आठ तक शिक्षा प्राप्त की थी। युवा होने पर आपने अपना व्यवसाय आरम्भ किया। सन् 1964 में आप जिन्द से कीरतपुर आये थे और तब से यह स्थान आपकी कर्मभूमि बन गया। श्री आर्य में यज्ञों के प्रति गहरी श्रद्धा व निष्ठा थी। आप यज्ञ के लिये अपना सर्वस्व समर्पित करने की भावना रखते थे। यज्ञ की तुलना में अन्य कार्यों को आप अधिक महत्व नहीं देते थे। **यज्ञों के प्रति आपकी गहरी भावना का ही परिणाम हैं कि आपने 100 बार सामवेद पारायण यज्ञ, 100 बार यजुर्वेद पारायण यज्ञ और 14 बार चतुर्वेद पारायण यज्ञ किये। यह कार्य कोई छोटा कार्य नहीं है। हमें तो यह असम्भव सा ही प्रतीत होता है। इससे आपकी वैदिक धर्म और उसमें विधेय यज्ञों के प्रति गहरी आस्था, निष्ठा व भावना का परिचय मिलता है। आपने यज्ञ के प्रति अपनी निष्ठा का परिचय एक बार एक लाख पच्चीस हजार गायत्री मन्त्र से आहुतियों का यज्ञ रचाकर भी दिया और एक बार 1.25 करोड़ गायत्री मन्त्र की आहुतियों से किये यज्ञ में आप सहभागी बनें। स्वामी विज्ञानानन्द जी, वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक के यशस्वी प्रधान रहे हैं। उनकी प्रेरणा से आप एक बार 4.32 करोड़ गायत्री मन्त्र के जप के अनुष्ठान में भी सहभागी बने।** हमें तो लगता है कि आध्यात्मिक अनुष्ठानों के प्रति आपकी भावना की कोई सीमा नहीं थी और जो कुछ आपने अपने जीवन में किया, वह आध्यात्मिक अनुष्ठानों की पराकाष्ठा कही जा सकती है। **आपका जीवन अध्यात्म के क्षेत्र में असम्भव को सम्भव करने का एक महनीय उदाहरण है।** धन्य हैं ऋषि दयानन्द और महात्मा प्रभु आश्रित जी जिनकी प्रेरणा से आपने इतने महान अनुष्ठानों का अपने जीवन में सम्पादन किया। आप भले ही वानप्रस्थी व संन्यासी न बने हों परन्तु भाव व स्वभाव से तो आप संयस्त स्वभाव व भावना के धनी ही सिद्ध होते हैं।

आपने कुछ आर्य संस्थाओं के अनेक उत्तरदायित्वों का भी वहन किया है। आप वर्तमान में वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक के अधिष्ठाता थे। यह आश्रम अध्यात्म के अनेक अनुष्ठान और वेद पारायण महायज्ञ आदि आयोजित करता रहता है। आप आर्ष कन्या गुरुकुल विद्यापीठ, श्रवणपुर–नजीबाबाद के भी वर्षों तक प्रधान रहे। इस प्रसिद्ध गुरुकुल की विदुषी आचार्या बहिन डॉ. प्रियम्वदा वेदभारती जी की प्रसिद्धि पूरे आर्यजगत और भारत में है। बहिन जी वेद पारायण यज्ञ एवं अन्य वैदिक अनुष्ठान भी कराती हैं। अभी एक–दो वर्ष पूर्व आप देहरादून के वैदिक साधन आश्रम तपोवन में आयोजित उत्सव में वेद पारायण यज्ञ की ब्रह्मा थी। आपके गुरुकुल की छात्राओं द्वारा यहां वेद पारायण यज्ञ में वेद मन्त्रों का सस्वर पाठ किया जाता था। आपके लगातार विद्वतापूर्ण व्याख्यान व प्रवचन सुनने तथा उन्हें लिपिबद्ध कर फेसबुक, व्हटसप तथा इमेल से अपने पाठकों तक पहुंचाने का सुअवसर भी हमें मिला था। इस अवसर पर हमें बहिन प्रियम्वदा जी के वैदुष्य को जानने व समझने का सुअवसर मिला और हम उनके प्रवचनों को सुनकर धन्य हुए थे। इन संस्थाओं के अतिरिक्त भी महात्मा दीपचन्द आर्य जी कुछ

अन्य शिक्षण एवं अन्य संस्थाओं के न्यासी एवं संरक्षक रहे जिससे उन संस्थाओं को फलने फूलने का अवसर मिला। ऐसी पवित्र व महान आत्मा को हम सादर नमन एवं वन्दन करते हैं।

महात्मा दीपचन्द आर्य जी के तीन पुत्र एवं चार पुत्रियां हैं। पुत्र श्री विजय कुमार गोयल, श्री सुन्दर कुमार गोयल एवं श्री महेश कुमार गोयल हैं तथा पुत्रियां श्रीमती उमादेवी जी (स्वर्गीय), श्रीमती सन्तोष अग्रवाल, श्रीमती शशि अग्रवाल एवं श्रीमती सविता अग्रवाल हैं। आपके पौत्रों में श्री मेहुल गोयल एवं श्री वरुण गोयल सहित तीन पौत्रियां वर्णिका जी़, अक्षरा जी एवं वसुधा जी हैं। आपके कनिष्ठ पुत्र श्री महेश कुमार गोयल जी की धर्मपत्नी आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान एवं नेता महात्मा प्रेमभिक्षु जी, मथुरा की पौत्री हैं। हमने महात्मा प्रेमभिक्षु जी के वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून में लगभग 30 वर्ष पूर्व दर्शन किये थे और उनके प्रवचन को सुना था। महात्मा प्रेमभिक्षु जी की मृत्यु के बाद उन पर एक लेख लिखा था जो मासिक पत्रिका तपोभूमि, मथुरा के विशेषांक में प्रकाशित हुआ था। आज भी हम महात्मा प्रेमभिक्षु जी द्वारा संचालित पत्रिका तपोभूमि के नियमित सदस्य हैं।

महात्मा दीपचन्द आर्य जी के निधन से ऋषि दयानन्द और यज्ञों का एक दीवाना कम हो गया है। उनके तीनों पुत्र अपने पिता के अनुरूप आध्यात्मिक एवं धार्मिक प्रवृत्ति के हैं। अब उन पर दायित्व है कि वह अपने पिता के यश को कायम रखें व उसे बढ़ायें। हम श्री विजय कुमार गुप्त जी से परिचित हैं। आप देहरादून के प्रसिद्ध वैदिक साधन आश्रम, तपोवन के न्यासी व सदस्य हैं। इसके प्रत्येक उत्सव पर पधारते हैं। यज्ञ में यजमान बनते हैं। आश्रम को दान से सींचते हैं। आप सज्जन प्रकृति एवं उदार तथा दानी वृत्ति के आर्यपुरुष हैं। आपके दोनो अनुज भी प्रकृति व व्यवहार में आपके सदृश्य एवं अनुरूप हैं। ईश्वर की कृपा इस परिवार पर बनी रहें और पिता की ही तरह इनके संरक्षण में श्री दीपचन्द आर्य जी द्वारा पोषित संस्थाओं का पोषण होता रहे। हम श्री दीपचन्द आर्य जी के निधन पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और उनके परिवारजनों के प्रति अपनी सद्भावना व्यक्त करते हैं। 23 दिसम्बर, 2018 को महात्मा दीपचन्द आर्य की स्मृति में उनके नगर कीरतपुर स्थित निवास पर श्रद्धांजलि एवं स्मृति यज्ञ व सभा का आयोजन हुआ। गुरुकुल पौंधा देहरादून के आचार्य डॉ. धनंजय उस आयोजन में उपस्थित हुए। हमें भी उनके साथ वहां जाना था परन्तु देहरादून में आचार्य डॉ. वागीश शास्त्री, गुरुकुल–एटा के व्याख्यानों एवं इससे जुड़े कार्यक्रमों में हमारी उपस्थिति की आवश्यकता के कारण हम जा नहीं सके। इसका हमें दुःख है। हमें इस लेख विषयक कुछ जानकारियां व चित्र आचार्य धनंजय जी से मिले हैं। हम उनके ऋणी हैं और उनका धन्यवाद करते हैं।

सफलता उन्हीं लोगों को मिलती है, जो स्वयं पर विश्वास रखते हैं,
कि हमारे अंदर परिस्थितियों से लड़ने की कुछ अधिक शक्ति है।

क्या बनना चाहते हो? पुरुष या स्त्री!

—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

एक राजा बेचैन था। उसे किसी करवट चैन न था, क्योंकि उसका घर सन्तान के दीपक से प्रकाशमान् नहीं था। मोमबत्तियाँ जलती थीं। लैम्प प्रज्वलित होते थे। हीरों की चमक प्रकाश उत्पन्न करती थी, परन्तु राजा को महल अन्धकारमय प्रतीत होता था। उसके हृदय में अँधेरा था। उसकी आँखों के सामने कोई प्रकाशवाली वस्तु न थी, जो उसके हृदय को प्रकाशित कर सके।

अन्ततः उसके घर में एक पुत्री उत्पन्न हुई। खुशी के बाजे बजे और सारा महल हँसी—खुशी के तरानों से भर गया। लड़की बढ़ी और बढ़ते—बढ़ते लड़की बन गई, परन्तु राजा चकित है, रानियाँ दुःखी हैं और जो भी इस बात को सुनता है वह लज्जित होता है कि लड़की कपड़े नहीं पहनती। इधर कुर्ता पहनाया, उधर उसने फाड़कर फेंक दिया। इधर धोती बाँधी और उसने अलग कर दी। लाख—लाख प्रयत्नों से वस्त्र पहनाये जाते हैं, परन्तु लड़की कुछ ऐसी हठ पर अड़ी है कि वह वस्त्रों को अलग फेंक देती है और तनिक भी वस्त्र पहनना पसन्द नहीं करती। समय ऐसे ही व्यतीत होता गया। एक वर्ष, तीन वर्ष, चार वर्ष—ऐसे ही पर्याप्त समय व्यतीत हो गया। लड़की शैशव—बचपन से निकलकर जवान होने लगी, परन्तु उसे वस्त्रों से चिड़ है। वह निःसंकोच नंगी ही फिरती है और तनिक भी लज्जा अनुभव नहीं करती। राजा ने कई यत्न किये, अनेक प्रयत्न किये, परन्तु कोई भी उपाय सफल नहीं हुआ।

अन्ततः एक दिन राजा के महल में एक साधु आ गये। लड़की ने उस साधु को देखा और दौड़कर अन्दर चली गई और वस्त्र पहन लिये। राजा ने जब उसे वस्त्र पहने देखा तो प्रसन्न होकर लड़की से पूछा— "यह आज कैसा अच्छा दिन है जो तुम्हें कुछ—कुछ समझ आई है, परन्तु यह तो बताओ कि पहले क्यों वस्त्र पहनने से इन्कार करती थी और वस्त्रों को फाड़कर फेंक देती थी। यद्यपि लाख—लाख प्रयत्न किये तो भी तुमने वस्त्र नहीं पहने।"

इस पर लड़की ने बड़ी शालीनता से उत्तर दिया—

सुनो पिताजी! स्त्री को पुरुष से लज्जा अनुभव होती है। स्त्री से स्त्री को कोई लज्जा नहीं होती। जब से मैंने होश सँभाला है तब से आपके नगर में मुझे कोई भी मर्द—पुरुष दिखाई नहीं दिया। आज एक साधु हमारे महल में आया। मैंने उसे देखा वह मर्द है, बस, मैंने तुरन्त वस्त्र पहन लिये। राजन्! मर्द—पुरुष किसका नाम है? पुरुष उसे कहते हैं जिसने अपने शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में कर लिया है और जिसने अपने शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में नहीं रखा वह मर्द नहीं है।

बस, सच्चे ईश्वरभक्त के अतिरिक्त और कोई मर्द ऐसा नहीं हो सकता जो इनको वश में कर सके। मुझे आपके नगर में कोई ऐसा ईश्वरभक्त दिखाई नहीं दिया, इसलिए मैं किसी को मर्द नहीं समझती थी। आज मैंने एक ईश्वरभक्त देखा है, इसलिए मुझे शर्म आई और मैंने वस्त्र पहन लिये।

यही तात्पर्य गार्गी और याज्ञवल्क्य के मनोहर वार्तालाप से प्रकट होता है, जिसमें गार्गी याज्ञवल्क्य को कहती है कि "हे याज्ञवल्क्य ! मैं इस जगत् को अपुरुष, अर्थात् पुरुषहीन देखती

हूँ। मुझे इस संसार में कोई पुरुष अर्थात् मर्द दिखाई नहीं देता।" आगे चलकर गार्गी कहती है कि "जो पुरुष अपने हृदय में स्थित आत्मा को नहीं जानता, वही स्त्री है।"

वस्तुतः वह पुरुष कहलाने का अधिकारी नहीं जो अपने आपको पहचानकर ईश्वरभक्त नहीं बनता। जो पुरुष पुरुष होकर अपने–आपको सांसारिक भोग–विलास का दास बना देता है, वह एक प्रकार से भोग– विलास को अपना पति स्वीकार कर लेता है। वह स्वयं पत्नी बन जाता है। एक पुरुष धन के लिए व्याकुल रहकर उन्हें अपना पति बना लेता है और समझता है कि उसके बिना मेरा निर्वाह नहीं है।

तीसरा संसार की किसी अन्य वस्तु का इतना दास हो जाता है कि वह उस वस्तु को ही अपना पति समझने लगता है। इस प्रकार संसार में प्रत्येक मर्द किसी न किसी रूप में स्त्री बन जाता है और अपने वास्तविक पुरुषपन को नष्ट कर देता है।

इस बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए आप एक धनिक का उदाहरण लें। एक धनिक धन का इतना दास है कि वह उससे एक मिनट के लिए भी पृथक् होना अपनी मृत्यु समझता है। किसी प्रकार से वह धन उससे छीन लिया जाता है। अब वह धनिक उस धन के वियोग में पतिव्रता स्त्री की भाँति कुढ़ता और तड़पता हुआ कभी–कभी तो आत्महत्या कर लेता है। क्या इन अर्थों में वह धनिक धन की स्त्री नहीं?

अब पाठक बताएँ कि वे क्या बनना चाहते हैं? उन्हें पुरुष बनना स्वीकार है या स्त्री? इस बात का निर्णय वे स्वयं ही कर सकते हैं, क्योंकि यह निर्णय करना उनके अपने हाथ में है। शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में करना एक पुरुष कहलाने वाले मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है और शरीर तथा इन्द्रियाँ ईश्वरभक्ति से ही वश में हो सकती हैं। सच्चा ईश्वरभक्त उनका स्वामी होता है–उनका पति होता है, परन्तु जो ईश्वरभक्त नहीं है, वह शरीर और इन्द्रियों की पत्नी बन जाता है।

जो लोग इस तथ्य को समझेंगे, वे निःसन्देह नास्तिक बनकर अपने जीवन को नष्ट नहीं करेंगे।

'वीर शिवाजी की मातृ–भक्ति से जुड़ी विश्व इतिहास की अपूर्व घटना'

छत्रपति शिवाजी महाराज आर्य महापुरुष थे। आप माता जीजा बाई के पुत्र थे। एकबार शिवाजी की माता जीजाबाई बीमार हो गईं और उनका स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा था। शिवाजी अपनी माता से बहुत प्रेम करते थे, अतः उन्हें अपनी मां की बहुत चिन्ता हुई। शिवाजी एक प्रसिद्ध वैद्य के पास गये और उन्हें अपनी माता का पूरा हाल बताया। वैद्यजी ने शिवाजी को माता के इलाज के लिए शेरनी का दूध लाने को कहा और बताया कि शेरनी के दूध से ही तुम्हारी माताजी स्वस्थ हो सकती हैं।

वैद्य जी की बात को सुनकर शिवाजी शेरनी के दूध की तलाश में एक घोर जंगल में निकल पड़ें। उन दिनों शीत ऋतु अपने यौवन पर थी। शिवाजी ने प्रातःकाल की वेला में देखा कि एक शेरनी जंगल में एक वृक्ष की ओट में ठण्ड से कांप रही थी। शिवाजी निर्भयतापूर्वक उस शेरनी के पास गये और एक पात्र में शेरनी का दुग्ध निकाला। दुग्ध लाकर शिवाजी ने वह दुग्ध वैद्यजी को सौंप दिया। वैद्यजी ने उस दुग्ध में औषधियां मिलाकर उसे शिवाजी की माता जीजाबाई को पिलाया। इस उपचार से शिवाजी की माताजी निरोग हो गईं। अपनी माता को निरोग करने के लिए शेरनी को ढूंढना और उसका दूध निकालना, यह मातृभक्ति व वीरता की इतिहास की सर्वोत्तम स्वर्णिम घटना है और यह शिवाजी की अपनी माता के प्रति भक्ति व उनके समर्पण भाव को प्रस्तुत करती हैं। इस कार्य को करने से वीर शिवाजी इतिहास में अमर हो गये। यह घटना विश्व के सभी पुत्रों के लिए एक आदर्श उदाहरण बन गई है।

कवि वीरेन्द्र कुमार राजपूत का ऋग्वेद काव्यार्थ

—स्वामी विदेह योगी जी, कुरुक्षेत्र

"अनन्ता वै वेदा।" वेद अनन्त हैं। ऐसा मनु वचन है। बहुत पहले छोटी उम्र में हमने सुना था— "हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।" इसका अर्थ है कि दुःखों का हरण करने वाले प्रभु अनन्त हैं और उनकी कथा अर्थात् जो गुणों का गान है वह भी अनन्त है। जब प्रभु अनन्त हैं तो उनका ज्ञान—वेद भी अनन्त है तथा उस प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव भी अनन्त हैं। यजुर्वेद में उस ईश्वर को कवि कहा है। अतः मेरे मन में आया कि मैं कह दूँ— "कवि अनन्त, कवि की महिमा अनन्त और कवि का काव्य भी अनन्त।" अनन्त गुणों वाले परम कवि परमेश्वर का काव्य दो प्रकार का है— प्रथम दृश्य काव्य और द्वितीय श्रव्य काव्य। उसके काव्य की विशेषता है— "पश्य देवस्य काव्यं न ममार न जीर्यति।" अर्थात् उस दिव्य देव के काव्य को देखो, जो न तो नष्ट होता है और न ही जीर्ण अर्थात् पुराना होता है। क्या है वह काव्य? इसे जानें—

1— दृश्य काव्य— यह जो ईश्वर ने सृष्टि रची है, यह देव का दृश्य काव्य है। जब हम इस पर दृष्टि डालते हैं, तो हमें सर्वत्र एक लयबद्धता का दिग्दर्शन होता है। कहीं जल समीप, वायु के समीप, धधकती अग्नि के समीप खड़े होकर देखें। पृथिवी के कणों को ध्यान से देखें। आकाश में भी अनुभव करें। सर्वत्र एक लय—ध्वनि तरंगे सुनने को मिलती हैं। यदि इन सब में ध्वनि तंरगे न हों तो कुछ भी अपनी परिधि में टिक नहीं पायेगा। सभी लोक लोकान्तर धड़—धड़ाकर नष्ट हो जाएंगे। तो समझ में आया कि ये जो दृश्य काव्य है, ये श्रेष्ठ है, अनन्त है। इसका कोई पारावार नहीं है।

2— श्रव्य काव्य— ईश्वर का दूसरा काव्य है श्रव्य काव्य। सृष्टि के आदि से लेकर आज तक ऋषि—मुनि, विद्वज्जन जिसको सुनते और सुनाते आये हैं, इसलिये वह श्रुति है अर्थात् वेद है। वेद ईश्वर का ज्ञान है। ईश्वर अनन्त है, उसका ज्ञान—वेद भी अनन्त है।

लोक में हमने सुना है कि 'जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि', अर्थात् इस लौकिक कवि की कल्पना शक्ति भी अति विशाल है। श्री वीरेन्द्र कुमार राजपूत जी भी एक कवि हैं। उनकी कल्पना शक्ति भी अति विशाला है। इन्होंने एक संकल्प लिया है— चारों वेदों का काव्यानुवाद करने का।

यूं तो कवि की मनीषा अति विशाला है, किन्तु हैं तो मनुष्य ही। और मनुष्य का सामर्थ्य असीम नहीं हो सकता, ससीम होता है। और वेद तो अनन्त कवि का अनन्त काव्य है। तब मुझे महाकवि कालिदास की वो उक्ति स्मरण आती है, जो उसने रघुवंश महाकाव्य लिखते समय कही थी—

"कव सूर्य प्रभवो वंशः कव चाल्पविषमामतिः।
तितीर्षु दुष्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।"

अर्थात् कहाँ तो सूर्य से उत्पन्न अति महिमामय रघुवंश और कहाँ मेरी अल्प विषय

वाली बुद्धि। ऐसा लगता है जैसे अज्ञानता से छोटी सी नौका द्वारा दुस्तर समुद्र को पार करना चाहता हूँ।

श्री वीरेन्द्र कुमार राजपूत जी भी अपनी लघु लेखनी से वेदरूपी समुद्र को पार करने का प्रयास कर रहे हैं और मुझे पूर्ण विश्वास है कि जैसे महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य की रचना पूर्ण कर ली थी, वैसे ही श्री राजपूत जी भी चारों वेदों के काव्यानुवाद को अवश्य ही पूर्ण करेंगे। यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद, इन वेदों का काव्यानुवाद श्री राजपूत जी पूर्ण करके आर्य जनता को समर्पित कर चुके हैं। अब ऋग्वेद का काव्यानुवाद भी दोहा छन्द में प्रारम्भ कर दिया है, जिसे ये अवश्य ही पूर्ण कर लेंगे क्योंकि परम कवि परमेश्वर ने अपने दिव्य काव्य वेद का लोक–भाषा में काव्यानुवाद कराने हेतु वैदिक कवि श्री वीरेन्द्र कुमार राजपूत जी की नियुक्ति स्वयं ही की है।

जहाँ इस वेद काव्यानुवाद के महत् कार्य में श्री राजपूत जी के ऊपर ईशानुग्रह है, वहीं इनकी एक बहुत बड़ी शक्ति है इनकी धर्म पत्नी श्रीमती सुशीला देवी जी। सुशीला देवी जी वास्तव में– 'सु+शीला+देवी' ही हैं। ये श्री राजपूत जी की ऐसी प्रेरक ऊर्जा हैं कि राजपूत जी को बरबस वेद के कार्य में लगे ही रहना पड़ता है। कविवर राजपूत जी जिन विषम परिस्थितियों में इस कार्य को कर पा रहे हैं, परिचित जन उससे अच्छी प्रकार से अवगत हैं। यद्यपि ये अपने वर्धापन की ओर जा रहे हैं और सुशीला जी का शारीरिक स्वास्थ्य बहुत ठीक नहीं रहता है। वे व्हील चेयर पर हैं। तथापि राजपूत जी अपने गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए– उनकी सेवा सहयोग करते हुए तथा घर के अन्य कार्यों को करते हुए भी इनके लिए वेदकाव्यानुवाद का कार्य प्रथम क्रम पर है।

परमेश कवि ने ऐसे कवि का चयन किया है, जो पूर्णतया संकल्पित है वैदिक परम्परा को, ऋषि दयानन्द की परम्परा को। और जो व्यक्ति वैदिक परम्परा व ऋषि दयानन्द की परम्परा को संकल्पित और समर्पित हो, उसका संकल्प कभी कमज़ोर हो नहीं सकता। घर की परिस्थितियाँ कैसी भी हों, वो बाधा नहीं बन सकती हैं। और इसमें एक खास बात यह भी है कि सुशीला जी का इस कार्य में विशेष सहयोग है। वे स्वयं एक प्रेरणा बनी हुई हैं। मैंने तो यह अनुभव किया है कि शरीर बहुत बाधा नहीं बनता, जब व्यक्ति का संकल्प सुदृढ़ होता है।

मैं कविराट् श्री राजपूत जी के सम्बन्ध में क्या कहूँ? बहुत ही सरल, सहृदय तथा मिलनसार स्वभाव के व्यक्तित्व हैं ये और संकल्प के धनी हैं। लक्ष्य निश्चित करके उसकी ओर दौड़ पड़ते हैं। लक्ष्य प्राप्त करके ही दम लेते हैं, उससे पहले रूकने का कोई काम नहीं। मैं श्री वीरेन्द्र कुमार राजपूत जी को उनके भागीरथ पुरुषार्थ के लिये बधाई देता हूँ और उनके कार्य करने की प्रबल इच्छा के लिये उनकी प्रशंसा करता हूँ। मैं पूर्ण विश्वास करता हूँ कि ईश्वर ने इन्हें नियुक्त किया है, तो जहाँ इनकी नियुक्ति हुई है, जिस कार्य के लिये नियुक्ति हुई है, संकल्प के धनी हैं, इसलिये वे संकल्प को पूर्ण करके ही विश्राम करेंगे।

आशा है वेद स्वाध्यायशील जन इस वेद काव्यानुवाद का रसास्वादन कर, ईशानन्द की प्राप्ति कर सकेंगे।

लाला हरदयाल

—स्वामी यतीश्वरानन्द जी महाराज

''पुरुष अनजान हैं और स्त्रियाँ दासता में हैं, द्वेष बढ़ाने वाले जातिभेद आदमी को आदमी से अलग करते हैं। हिन्दू व मुसलमान स्वयं को एक देश का नहीं मानते। तरक्की के लिये जरूरी नैतिक ऊर्जा को बचाने के लिये इन सब बुराइयों को नष्ट करना होगा....ब्रिटिश हमारे बच्चों को इतिहास का विद्रूप सिखाते हैं... वे बताते हैं कि हम एक असमर्थ जाति हैं..... रोइये उस देश पर जो अपने बच्चों को ऐसा इतिहास पढ़ने की इजाजत देता है..... संस्कृत की पढ़ाई जरूरी है क्योंकि संस्कृत के नष्ट होने के साथ ही हिन्दू सभ्यता की इमारत ढह जायेगी।''

गम्भीर आदर्शवादी क्रान्तिकारी, ओजस्वी वक्ता, लब्धप्रतिष्ठ लेखक और विलक्षण बौद्धिक क्षमता के स्वामी लाला हरदयाल का नाम भारतवर्ष के क्रान्तिकारियों में एक अलग ही स्थान रखता है। अमेरिका में गदर पार्टी के संस्थापक, विदेशों में रह रहे भारतीयों में क्रान्ति के प्रेरणा स्रोत, ब्रिटिश व अमेरिका सहित सारे विश्व के बौद्धिक जगत में समादृत लाला हरदयाल का जन्म दिल्ली के चांदनी चौक क्षेत्र में गुरुद्वारा शीशगंज के पीछे स्थित चीराखाना मौहल्ले में 13 अक्तूबर 1884 को हुआ था। पिता गौरी दयाल माथुर एवं माता भोली रानी की सात संतानों में छठे हरदयाल बचपन से ही विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। पिता उर्दू व फारसी के विद्वान थे तथा जिला–अस्पताल में कॉपी रीडर थे। घर में पढ़ाई–लिखाई के माहौल ने हरदयाल को कम उम्र में ही विद्याव्यसनी बना दिया था। चौदह वर्ष की उम्र में इन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की तथा सेंट स्टीफेंस में इण्टरमीडिएट में दाखिला ले लिया। सत्तरह वर्ष की आयु में इनका सुन्दर रानी से विवाह हो गया। इनके पुत्र की अल्पायु में ही मृत्यु हो गई। फिर 1908 में इनके यहाँ एक पुत्री का जन्म हुआ। इन्होंने लौहार से पंजाब विश्वविद्यालय से बी.ए. किया और इन्हें छात्रवृत्ति मिलने लगी। 1903 में गवर्नमेंट कॉलेज, लाहौर से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. किया और पूरे विश्वविद्यालय में प्रथम आये। 1904 में इन्होंने आधुनिक इतिहास में भी एम.ए. कर लिया। विश्वविद्यालय की सिफारिश पर सरकार ने इन्हें दो सौ पाउण्ड की छात्रवृत्ति इंग्लैण्ड में उच्चतर शिक्षा के लिये मंजूर की। इस कारण ये अक्टूबर 1905 से सेंट जॉन्स कॉलेज, ऑक्सफोर्ड में आधुनिक इतिहास पढ़ने लगे। बहुत कम आयु से आर्य समाज के प्रभाव के कारण देश–प्रेम की तीव्र भावना इनके मन में थी ही, साथ ही ये मास्टर अमीरचन्द की गुप्त क्रान्तिकारी संस्था के भी सदस्य थे। उन दिनों लंदन में श्यामजी कृष्ण वर्मा के 'इण्डिया हाउस' में भारतीय छात्रों को क्रान्तिकारी दर्शन में ढालने का काम किया जाता था। 1907 में श्यामजी के मासिक पत्र 'द इण्डियन सोशियोलॉजिस्ट' में इन्होंने राष्ट्र–प्रेम से ओत–प्रोत एक लेख लिखा जिसके कारण इन्हें सरकार निगरानी में रखने लगीं। तब ये आई.सी.एस. की तैयारी कर रहे थे। अपने इतिहास के अध्ययन से इन्हें स्पष्ट हो गया कि सरकारी नौकरी अपने देश से द्रोह के सिवा

कुछ नहीं है, अतः इन्होंने ''भाड़ में जाये आई. सी.एस.!'' कहकर सिविल परीक्षा की तैयारी, अपनी स्कॉलरशिप व ऑक्सफोर्ड डिग्री की पढ़ाई तत्काल छोड़ दी और लंदन में देशभक्त समाज स्थापित कर असहयोग का प्रचार करने लगे। तब इनकी पत्नी भी ऑक्सफोर्ड में पढ़ाई कर रही थी। वह भी इनके साथ राष्ट्र–निर्माण के काम में जुट गई। मैजिनी, मार्क्स, बाकुनिन के दर्शन के अध्ययन के साथ संस्कृत साहित्य की साधना भी इन्होंने की थी। 1908 में ये भारत वापस आ गये तथा अत्यन्त सादगीपूर्ण जीवन जीने लगे। भारत में इनके राष्ट्रवादी लेख जब अखबारों में छपे तो ब्रिटिश सरकार ने इनके लेखों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। लाला लाजपतराय की सलाह पर ये पेरिस चले गये तथा 'वन्दे मातरम्' नामक अखबार के सम्पादक बन गये। पेरिस में अधिकारियों द्वारा परेशान किये जाने पर ये फ्रांस के अफ्रीकी उपनिवेश अल्जीरिया चले गये तथा वहां से फ्रांस के कैरेबियाई उपनिवेश द्वीप मार्तिनीक चले गये। मार्तिनीक में ये सन्यासी का जीवन जीने लगे। प्रसिद्ध आर्यसमाजी क्रान्तिकारी भाई परमानन्द इन्हें ढूँढते हुए मार्तिनीक आए तथा इनसे हिन्दू संस्कृति के प्रचार के लिये अमेरिका जाने का अनुरोध किया। बोस्टन से कैलिफोर्निया व फिर होनोलुलु (हवाई द्वीप) की इन्होंने यात्रायें की, जापानी बौद्धों के सम्पर्क में आये तथा होनोलुलु के समुद्र तट के पास गुफा में रहकर शंकराचार्य, कांट, हीगल और मार्क्स का अध्ययन करने लगे। अमेरिका लौटने पर इन्हें स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत व भारतीय दर्शन के प्रवक्ता के पद पर नियुक्ति मिल गई। साथ ही कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में भी इनके व्याख्यान आयोजित किये गये। अमेरिकी बुद्धिजीवी इन्हें हिन्दू संत, ऋषि एवं स्वतंत्रता सेनानी कहा करते थे। उस समय ये अमेरिका में मजदूर संघों की गतिविधियों में हिस्सा लेने लगे थे तथा उस समय के प्रसिद्ध एनार्किस्ट (सत्ताविहीनता) आंदोलन से जुड़ गये थे। अतः इन्होंने प्रवक्ता के पद से इस्तीफा दिया तथा भारतीय मजदूरों को संगठित करने के काम में जुट गये। इन्होंने अमेरिका में रह रहे भारतीय छात्रों के लिये गुरुगोविन्द सिंह के नाम पर स्कॉलरशिप शुरु की तथा लंदन के 'इण्डिया हाउस' की तर्ज पर बर्कले विश्वविद्यालय के पास एक इमारत किराये पर ले ली।

जब 23 दिसम्बर 1912 को बसन्त कुमार विश्वास ने भारत के वायसराय लार्ड हार्डिंग के काफिले पर दिल्ली में बम फेंका तो लाला हरदयाल को भरोसा हो गया कि भारत में वो युवा शक्ति विद्यमान है जो तुरन्त क्रान्ति के लिये तैयार है। 1913 में इन्होंने अमेरिका व कनाडा में बसे भारतीयों को संगठित कर 'गदर' पार्टी की स्थापना की तथा 'गदर की गूंज' पत्र निकालना आरम्भ किया। गदर आंदोलन का उद्देश्य भारत में सशस्त्र क्रान्ति के लिये सैनिकों को प्रेरित करना था। तभी विश्व युद्ध शुरू हो गया तथा ब्रिटिश दबाव में अमेरिकी सरकार ने लाला हरदयाल को गिरफ्तार कर लिया। जमानत पर रिहा होने के बाद ये स्विटजरलैण्ड भाग गये। फिर बर्लिन आकर इन्होंने ''ओरिऐंटल ब्यूरो'' खोला तथा क्रान्ति के लिये राजा महेन्द्र प्रताप और मौलवी बरकतुल्ला के आंदोलन से जुड़ गये। जर्मनी में रहकर इन्होंने जर्मन उपनिवेशवाद को निकट से देखा और जर्मनी से निराश हो गये। तब इन्हें जर्मनी से बाहर कर दिया गया। 1920 में इन्होंने भारत सहित एशियाई देशों में

एशियाई व यूरोपीय देशों के मिले–जुले प्रशासन का समर्थन किया। 1927 तक ये स्टॉकहोम (स्वीडन) में रहे। इसके बाद अमेरिका वापस आ गये। पहले बर्कले विश्वविद्यालय में व फिर स्टैनफोर्ड में ये संस्कृत व दर्शन पढ़ाने लगे। 1930 में बौद्ध साहित्य में बोधिसत्व सिद्धान्त विषय पर इनकी एक पुस्तक को शोध–ग्रन्थ मानकर लंदन विश्वविद्यालय ने इन्हें पी.एच.डी. की उपाधि प्रदान की। फिर इन्होंने भारत व अमेरिका समेत विश्व के कई देशों में व्याख्यान माला शुरू की। 1938 में भारत सरकार ने इन्हें लौटने की अनुमति दे दी। 1939 में भारत के राष्ट्रवादियों के आग्रह पर इन्होंने भारतवर्ष आना स्वीकार किया। फिर खबर आई कि 04 मार्च 1939 को फिलाडेल्फिया, अमेरिका में एक भारतीय सन्यासी की मृत्यु हो गई है। इनका वहीं अन्तिम संस्कार कर दिया गया। बचपन के मित्र लाला हनुमंत सहाय का कहना था कि लाला हरदयाल को विष देकर मारा गया है परन्तु कुछ साबित न हो सका।

अपनी दार्शनिक यात्रा में क्रमशः नास्तिक से क्रान्तिकारी, उस से बौद्ध तथा बौद्ध से शांतिवादी बने लाला हरदयाल अपने समय की विशिष्ट प्रतिभा थे। 1930 तक ये तेरह भाषाओं में सिद्धहस्त थे, कभी किसी पुस्तक को दो–बार पढ़ते इन्हें नहीं देखा गया। इनकी स्मृति–क्षमता के सैकड़ों किस्से मशहूर हैं। स्वामी रामतीर्थ के अनुसार ये अमेरिका आने वाले सर्वश्रेष्ठ हिन्दू थे। भारतीय शिक्षा, संस्कृति, धर्म तथा साहित्य पर इनकी पुस्तकें विश्व–साहित्य की अनुपम कृतियां हैं। अपने ओजस्वी व्यक्तित्व एवं कृत्यों से इन्होंने उस समय भारत का नाम विश्व में चमकाया जब स्वयं भारत में संस्कृति के सूरज को ब्रिटिश राज–रूपी बादलों ने ढक रखा था।

बवासीर का अचूक इलाज – त्रिफलाचूर्ण

श्री एच० सी० अवस्थी

मेरी उम्र के 43 वर्ष पार कर जाने के बाद बवासीर की बीमारी ने उग्र रूप धारण कर लिया। सभी तरह की दवाएँ और काफी इलाज कराया, पर कोई लाभ न पहुँचा। नौबत ऑपरेशन तक आ गयी। तब अकस्मात् मुझे याद आया कि पू० पिताजी कहते थे कि 'त्रिफला चूर्ण पेट की बीमारी के लिये अमृत स्वरूप है।' पेट (शौच)– की समस्याएँ जब गम्भीर रूप धारण करती हैं तभी बवासीर की बीमारी होती है, ऐसा सभी जानकारों का कहना है। अतएव ईश्वर का स्मरण करते हुए बाजार से 'त्रिफला चूर्ण' की एक शीशी ले आया और रात्रि में सोते वक्त तीन चम्मच चूर्ण पानी के साथ ले लिया। दूसरे दिन बड़ी राहत महसूस हुई। इस प्रकार नवम्बर सन् 1998 ई० से लेकर मई सन् 1999 ई० तक एक भी दिन का नागा न करते हुए लगातार त्रिफला चूर्ण का सेवन किया। जिससे बवासीर की तकलीफ जाती रही। ऐसा लगने लगा कि आँखों की रोशनी भी कुछ बढ़ गयी है; क्योंकि महीन टाईप का अखबार भी मैं बिना चश्में की सहायता से अब पढ़ सकता हूँ। इसके अलावा उड़द की दाल, चने की दाल और बैंगन के खाने पर भी तकलीफ महसूस नहीं होती। लगभग प्रतिमाह 240 ग्राम त्रिफलाचूर्ण नियमित सेवन के लिये आवश्यक है। इसके बाद आवश्यकतानुसार अब मैं कभी–कभार 'त्रिफला चूर्ण' का सेवन करता हूँ। अतएव उपर्युक्त बीमारी से अस्वस्थ भाई–बहनें 'त्रिफलाचूर्ण' का सेवन कर स्वास्थ्य–लाभ करें, यही उनसे प्रार्थना है।

ओ३म्

भारत का सौभाग्य दुर्भाग्य में क्यों और कैसे परिवर्तित हो गया ?

—चमनलाल रामपाल, देहरादून

भवन की मजबूती उसकी नींव पर होती है यदि नींव ही टेढ़ी खड़ी कर दी जाये तो छोटा सा भूकंप भी छोटे से झटके में उसे मिट्टी के ढेर में बदल देता है। यही खेल भारत के भाग्य से हुआ। आश्रम व्यवस्था, वर्णव्यवस्था, गुरुकुल शिक्षा व्यवस्था आदि भारत की संस्कृति और उन्नति–प्रगति की नींव के पत्थर एवं वरदान थे। वर्ण व्यवस्था को कर्म से पृथक्कर जन्म से जोड़ दिया गया तो विनाश हो गया। ऐसा ही कुछ गुरुकुल शिक्षा को विद्यालयों में डाल दिया गया तथा शिष्य और आचार्य का संबंध पिता–पुत्र का न रहकर केवल सिक्कों के लेन–देन में रह गया तो शिक्षा का स्तर महान शिष्य उत्पन्न करने के स्थान पर निम्न–स्तर पर आ गया। इसी से भारत का सौभाग्य दुर्भाग्य में बदला, तथा वैदिक शिक्षा जैसा वरदान श्राप में परिवर्तित होकर रह गया। भारत की दशा व दिशा इसी कारण बिगड़ी कि जो भारत की उन्नति व प्रगति सामाजिक शक्ति सम्पन्न भारत को महान बना रही थी अर्थात् भारत की महानता का आधार थी, उन्हीं का स्वरूप बिगाड़कर श्राप में बदल दिया जैसे वर्ण व्यवस्था को गुण, कर्म व स्वभाव पर न रखकर जन्म से जोड़ दिया। वैदिक शिक्षा को गुरुकुल से निकालकर विद्यालयों में डाल दिया जिस कारण भारत की दशा व दिशा बिगड़ गयी। फलस्वरुप अतीत का महान भारत जो चक्रवर्ती राज्य स्थापित करता था, जो विश्व का संतुलन अपने हाथ में रखता था, जिसे विश्व गुरु की उपाधि प्राप्त थी, जो संगठित और खुशहाल था, चरित्रवान था, वह सब बिखरकर निर्बल और असहाय सा बन गया। फलतः छोटी–छोटी शक्तियां व देश खुशहाल भारत में लूट खसोट करने लगे और उन्होंने भारत को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर दिया। अब इसे समझने के लिये इन घटनाओं व तथ्यों को विस्तार से जानने का प्रयत्न करते हैं।

ऊपर हम भारतीय संस्कृति में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख कर चुके हैं। इस संदर्भ में यह माना जाता है कि जब तक भारत इन आश्रमों व वर्ण व्यवस्था की संस्कृति का पालक रहा, तब तक दिन दुगनी रात चौगुनी उन्नति व प्रगति करता रहा लेकिन जब इस वर्ण व्यवस्था को कर्म से तोड़कर जन्म से जोड़ दिया गया तो विनाश हो गया और आश्रम के स्थान पर विद्यालय बन गये तो शिष्य–गुरु प्रथा भूलने से चरित्रहीनता आ गयी। तत्पश्चात छुआछूत और समाज में वैर विरोध, अन्याय और शोषण का युग जाग उठा।

पाठक बन्धु, यह भी स्मरण रखें जैसा ऊपर उल्लेख किया गया है कि यह वर्ण व्यवस्था किसी जन्मजात से नहीं जोड़ी जाती थी। यह गुरुकुलीय शिक्षा का युग था और

गुरूकुल के छात्र जब गुरूकुल की शिक्षा पूरी कर लेते थे तो गुरूकुल में दीक्षा पर्व मनाया जाता था जिसमें गुरूकुल के आचार्य शिष्य को उसके गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार वर्ण यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य देते थे। वर्ण व्यवस्था का विवरण ऐसा था कि यदि काई शिष्य मेधावी है तो उसे ब्राह्मण वर्ण से जोड़ा जाता था। इसी प्रकार शारीरिक बल और साहस वाले छात्र को क्षत्रिय वर्ण से और व्यापारिक तीव्र बुद्धि रखने वाले छात्र को वैश्य वर्ण से नवाजा जाता था और जो सेवाभावी होता था उसे शूद्र वर्ण दिया जाता था। शूद्र शब्द का भावार्थ होता था दूसरों को शुद्ध करने वाला अर्थात् सेवा करने वाला। ये चार वर्ण ऐसे ही थे जैसे शरीर के चार अंग, शीश, भुजायें, पेट और पांव। ज्ञान विज्ञान देने वाला ब्राह्मण, बलशाली रक्षा करने वाला क्षत्रिय, भरण पोषण आदि का प्रबन्ध करने वाला वैश्य, दूसरों की सेवा करने वाला परमार्थी शूद्र। यह बात स्मरण रखने योग्य है कि इन चारों का दायित्व अपना अपना था और यह सभी श्रेष्ठ श्रेणी में आते थे, अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये सब समान आदर के पात्र थे। वह चारों वर्ण कर्मयोग से जुड़े हुए थे। लेकिन जब जन्म से जोड़ दिये गये तो सामाजिक ढांचा ही चरमरा गया और समाज में विनाश उत्पन्न हो गया। इससे राष्ट्र में फूट पड़ गयी और द्वेष जाग उठा और ऊंच–नीच का युग शुरू हो गया। इस फूट ने समाज और राष्ट्र को ऐसा फोड़ा कि भाग्य ही फूट गया और हमारा राष्ट्र स्वामी से दास बन गया तथा दानी से भिखारी। पाठक बन्धु, यहां पर सीख लेने की आवश्यकता है कि यदि शरीर के उपरोक्त चार अंग शीश, भुजायें, पेट, और पांव स्वस्थ रहें और अपना अपना दायित्व अच्छी प्रकार निभाते रहें तो शरीर स्वस्थ रहता है। इसी प्रकार उपरोक्त चार वर्ण और चार आश्रम संयुक्त रूप में अपनत्व की चासनी से अपना दायित्व निभायें। राष्ट्र और समाज को समर्पित रहें तो समाज और राष्ट्र भी स्वस्थ, निरोग और प्रगतिशील रहेगा। भारत का गौरवमय अतीत का इतिहास तथा अस्वस्थ गुलाम भारत के अतीत का इतिहास दोनों इसी ऐतिहासिक सच्चाई को सिद्ध करते हैं कि जैसा हमने चाहा वैसा ही हमारा समाज और राष्ट्र बनता रहा और अब भी जैसा चाहेंगे वैसा ही समाज और राष्ट्र बन जायेगा। आज के भारतीय समाज को अतीत के इतिहास से सीख लेने की आवश्यकता है। इतिहास की इस मौनवाणी को सुनने और समझने का प्रयत्न अवश्य करें। जो भारत को मौन भाषा में चुनौती एवं चेतावनी देता कह रहा है :

फूट ने फोड़े भाग्य तेरे, फूट को आज मिटा लो तुम।

अतीत का गौरव पाने के लिए, भविष्य का इहिास बना लो तुम।।

तथा

जीना है तो जी लो, एकता की छाया तले,
नहीं तो सोते रहोगे, दांस्तां की छाया तले।।

जैसा हमने आरंभ में उल्लेख किया है कि समाज और राष्ट्र की उन्नति, प्रगति और रक्षा के लिए तीन शक्तियों, आध्यात्मिक शक्ति, सामाजिक शक्ति और अपनत्व शक्ति का होना अति आवश्यक है तथा हमारा समाज और राष्ट्र सशक्त एवं सुदृण हो सकता है।

वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर (प्रथम स्तर)

(02 अप्रैल सायंकाल से प्रातः 09 अप्रैल 2019)

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून

यदि आप सत्य, सनातन वैदिक सिद्धान्त को आत्मसात् कर वैदिक साधना पद्धति के शुद्ध स्वरूप को प्रायोगिक स्तर पर समझकर स्वयं तथा ईश्वर की यथार्थ, निर्भ्रान्त अनुभूतियों को स्पर्श करना चाहते हों तो आपका वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी देहरादून में 02 अप्रैल 2019 सायंकाल से प्रारम्भ होकर प्रातः 09 अप्रैल 2019 को समाप्त होने वाले वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर प्रथम स्तर में भाग लेना सार्थक हो सकता है।

यह शिविर आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के मार्गदर्शन में होगा। इस शिविर में वैदिक योग का क्रियात्मक प्रशिक्षण तथा योग्यता व पात्रतानुसार शंका समाधानपूर्वक साधना हेतू मार्गदर्शन दिया जायेगा। समस्त दैनिक व्यवहार में मन को चिन्ता, तनाव से रहित कर शान्त व समता में बनाये रखना किस प्रकार से सम्भव हो सकता है, इसका प्रशिक्षण भी इसके अन्तर्गत होगा।

1. यह शिविर आवासीय है। शिविर में महिलाओं व पुरुषों की निवास व्यवस्था पृथक–पृथक होती है।
2. सम्पूर्ण शिविर मे विधिवत् भाग लेने के इच्छुक सज्जन ही आवेदन हेतू सम्पर्क करें। शिविर समापन से पूर्व वापिस जाना सम्भव नही हो सकेगा तथा 02 अप्रैल सायंकाल 6:00 बजे के बाद प्रवेश नही दिया जायेगा। इस कष्ट हेतु हम पूर्व से ही क्षमा प्रार्थी हैं।
3. प्रथम स्तर के शिविरों में भाग लेने वाले साधक ही आगे गम्भीर साधना के शिविरों में भाग ले सकेंगे।
4. शिविर में अधिकाधिक 125 साधक साधिकाओं की ही व्यवस्था सम्भव है। अतः इच्छुक जन पूर्व ही अपना स्थान सुरक्षित करा लें। पुराने शिविरार्थी भी भाग ले सकते है।
5. स्थान आरक्षण व अन्य जानकारी हेतु इन महानुभावों से सम्पर्क करें :–1. श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी, दिल्ली, (मो०नं०–09310444170) समय दिन में 10:30 बजे से सायं 4:00 बजे तक, एवं रात्री 8 बजे से 10 बजे तक, 2. श्री प्रेम जी – 9456790201 समय प्रातः 10:30 बजे से सायं 4:00 बजे तक, एवं रात्री 8 बजे से 9.30 बजे तक।

नोटः

1. अपनी वापिसी का आरक्षण पूर्व ही करा कर आयें। शिविर के मध्य अग्रिम यात्रा हेतु आरक्षण करवाने की सुविधा हमारे पास नही है।
2. शिविर में भाग लेने की न्यूनतम आयु सीमा 17 वर्ष है। अपने साथ संचिका, पेन, टार्च व फल काटने हेतु चाकू अवश्य लायें।
3. शुल्क–इस ईश्वरीय कार्य में शिविर हेतु श्रद्धा व भावनापूर्वक स्वैच्छिक सहयोग करना सभी प्रतिभागियों के लिये अनिवार्य है।
4. आवश्यकता होने पर आचार्य आशीष जी (मो०नं०–09410506701) से रात्रि 8.00 बजे से 9.00 बजे के मध्य सम्पर्क कर सकते है।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री	**ई. प्रेम प्रकाश शर्मा**	**सुधीर माटा**
अध्यक्ष–09710033799	सचिव–09412051586	कोषाध्यक्ष–9837036040

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

रायपुर रोड (नालापानी), देहरादून–248008, दूरभाष : 0135–2787001

आत्म–कल्याण का स्वर्णिम अवसर

योग–साधना, यजुर्वेद पारायण एवं गायत्री यज्ञ का विशेष आयोजन

तदनुसारेण 12 मार्च से 20 मार्च 2019 तक

यज्ञ के ब्रह्मा–स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी

आत्म–कल्याण के जिज्ञासुओं के लिए प्रभुकृपा से तपोवन आश्रम के ऊपरी प्रभाग–पहाड़ी पर एक लाख गायत्री महामंत्र एवं यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया जा रहा है। सच्चे, योग्य तथा समर्थ जिज्ञासु जन पूर्ण उत्साह के साथ श्रद्धा–आस्था समन्वित हुए भाग लेवें। यह आयोजन याज्ञिकों के लिये सर्वथा निःशुल्क होगा। श्रद्धापूर्वक दिया गया सहयोग ही स्वीकार किया जाएगा।

आयोजन में भाग लेने वाले जिज्ञासुओं के लिये अनिवार्य नियम अधोलिखित है–

सभी यज्ञप्रेमी सज्जनों और योग साधकों को 11 मार्च 2019 की सांयकाल तक पहुंचना आवश्यक होगा। 12 मार्च 2019 की प्रातःकाल से नियमित कार्यक्रम प्रारम्भ हो जायेंगे। कृपया अपने साथ चाकू, टार्च, कॉपी, पैन तथा ओढ़ने का वस्त्र अवश्य लायें।

कार्यक्रम सारिणी

प्रातः जागरण	3–4 के मध्य
योग साधना, आसन प्राणायाम, ध्यानादि	4 से 7 बजे प्रातः
यज्ञ प्रातःकाल	7:30 से 9:30 बजे
प्रातः प्रातराश	9:30 से 10:00 बजे
यज्ञ–सायंकाल	3.30 से 5.30 बजे सायं
साधना	6.00 से 8.00 बजे रात्रि
भोजन रात्रि	9.00 बजे तक
रात्रि–शयन	10.00 से 3.00 बजे

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री
अध्यक्ष–09710033799

ई. प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव–09412051586

सुधीर माटा
कोषाध्यक्ष–9837036040

वैदिक-गुरुकुलीय-शास्त्रीय-प्रतिस्पर्धा

–शिवदेव आर्य, गुरुकुल पौन्धा, देहरादून।

श्रीमद् दयानन्द वैदिक परिषद् द्वारा आयोजित तथा मानव सेवा प्रतिष्ठान द्वारा प्रायोजित प्रथम 'वैदिक– गुरुकुलीय–शास्त्रीय–प्रतिस्पर्धा' ८–९ दिसम्बर २०१८ को गुरुकुल गौतम नगर नई दिल्ली–110049 के देवकीनन्दन सभागार में हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न हुई।

अनेक गुरुकुलों के संस्थापक एवं श्रीमद् दयानन्द वैदिक परिषद् के अध्यक्ष सम्माननीय स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी के आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन से अष्टाध्यायी–कण्ठपाठ एवं लेखन, धातुपाठ–कण्ठपाठ एवं लेखन, त्रिभाषीकोष–कण्ठपाठ, वैदिक–सिद्धान्त प्रश्नमंच एवं शास्त्रार्थ–विमर्श (वाद–विवाद) सहित पाँच प्रतिस्पर्धाओं का आयोजन किया गया। वैदिक गुरुकुलीय शास्त्रीय प्रतिस्पर्धा के इस प्रथम संस्करण में २५ गुरुकुलों के ११९ छात्र–छात्राओं ने पूर्ण पुरुषार्थ के साथ भाग लिया। इन प्रतिस्पर्धाओं का संचालन वैदिक गुरुकुल परिषद् के सह–मन्त्री आचार्य डा. धनंजय ने किया।

सर्वप्रथम अष्टाध्यायी– कण्ठपाठ की प्रतिस्पर्धा आयोजित की गयी, जिसमें २५ प्रतिस्पर्धियों ने भाग लिया। इस अवसर पर प्रतिभागियों ने सम्पूर्ण अष्टाध्यायी को सुनाने के साथ–साथ लिखित परीक्षा भी दी। अग्रिम १० प्रतिभागियों को 'पाणिनीय' उपाधि से सम्मानित करते हुए पाँच–पाँच हजार की राशि प्रदान की गयी। ९९ प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त अग्रिम १० विजयी प्रतिभागी – प्रज्ञा (कन्या गुरुकुल शिवगंज, सिरोही), भानुप्रताप (गुरुकुल पौन्धा, देहरादून), अर्जुन (कान्हा आर्ष गुरुकुल नागपुर), ऋचा (कन्या गुरुकुल रुद्रपुर), ऋतम्भरा (कन्या गुरुकुल पंचगाँव), अंशिका (गुरुकुल रुद्रपुर), अनिकेत आर्य (गुरुकुल केरल), सत्यप्रकाश (आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय माउण्ट आबू), राकेश (गुरुकुल आमसेना, उड़ीसा), शुभम् (गुरुकुल गौतमनगर) रहे। इस प्रतिस्पर्धा के निर्णायक डा. श्रीवत्स (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), डा. उमा (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली) एवं डा. वेदव्रत (गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार) रहे।

द्वितीय प्रतिस्पर्धा धातुपाठ–कण्ठपाठ की आयोजित की गई, जिसमें 25 प्रतिस्पर्धियों ने भाग लेते हुए सम्पूर्ण धातुपाठ को सुनाकर लिखित परीक्षा देकर अग्रिम 10 प्रतिभागियों को 'शाब्दिक' की उपाधि तथा चार–चार हजार की राशि से सम्मानित किया गया। ९0 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त अग्रिम 10 विजेता प्रतिस्पर्धी इस प्रकार हैं– सूरज आर्य (कान्हा आर्ष गुरुकुल नागपुर), सुनीति (गुरुकुल रुद्रपुर), देवेन्द्र (गुरुकुल पौन्धा), अजय मलिक (श्रीवत्स गोरक्षा आश्रम, गंजाम, उड़ीसा), दिलीप दास (गुरुकुल गौतमनगर), प्रवेश (कन्या गुरुकुल पञ्चगाँव), राजश्री (विश्ववारा गुरुकुल रुड़की, रोहतक), शिवानी साहा (माता परमेश्वरी देवी गुरुकुल, सुनावेडा, उड़ीसा), वेदवती (गुरुकुल शिवगंज), विश्वरंजन महला (गुरुकुल हरिपुर, उड़ीसा)। इस प्रतिस्पर्धा के निर्णायक डा. बृजेश गौतम (अध्यक्ष, संस्कृत–शिक्षक–संघ, दिल्ली), डा. रवीन्द्र कुमार (भगवानदास संस्कृत महाविद्यालय, हरिद्वार) एवं डा. सुभाष (राजकीय महाविद्यालय तिजारा, अलवर, राजस्थान) रहे।

तृतीय प्रतिस्पर्धा त्रिभाषी शब्दकोष की

आयोजित की गई, जिसमें 14 प्रतिस्पर्धियों ने भाग लिया। इस प्रतिस्पर्धा में आचार्य ओंकार जी द्वारा लिखित 'त्रिभाषी–कोष' नामक पुस्तक के संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी के लगभग १५00 से अधिक शब्दों को प्रतिस्पर्धियों द्वारा सुनाया गया। इस प्रतिस्पर्धा में शीतल (विश्ववारा गुरुकुल, रुड़की, रोहतक) ने प्रथम, भारत कुमार (गुरुकुल पौन्धा, देहरादून) ने द्वितीय, तथा मनीषा (विश्ववारा गुरुकुल, रुड़की, रोहतक) ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इसके साथ ही दो सान्त्वना पुरस्कार पूजा (कन्या गुरुकुल पंचगांव) तथा हरिकेश आर्य (आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय माउण्ट आबू) ने प्राप्त किये। प्रथम पुरस्कार प्राप्तकर्ता का पाँच हजार, द्वितीय को दो हजार एवं तृतीय को एक हजार की राशि तथा सान्त्वना पुरस्कार में ५00–५00 रुपये की नगद राशि से सम्मानित किया गया। इस प्रतिस्पर्धा के निर्णायक डा. अजीत कुमार (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), डा. उमा आर्या (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), डा. नागेन्द्र मिश्र (गुरुकुल अयोध्या) रहे।

चतुर्थ प्रतिस्पर्धा वैदिक सिद्धान्त प्रश्न मंच की आयोजित की गई, जिसमें ४0 प्रतिस्पर्धियों ने भाग लिया। इस प्रतिस्पर्धा में कक्षा आठवीं तक के प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। इस प्रतिस्पर्धा में बाल–शिक्षा, व्यवहारभानु, पंचमहायज्ञविधि वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी, स्वामी दयानन्द जीवन परिचय से सम्बन्धित प्रश्नों को पूछा गया। जिसमें संध्या (विश्ववारा कन्या गुरुकुल, रुड़की, रोहतक) ने प्रथम, संध्या (कन्या गुरुकुल पंचगांव) ने द्वितीय तथा धर्मवीर आर्य (गुरुकुल पौन्धा, देहरादून) ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। साथ ही पाँच सान्त्वना पुरस्कार मनीष आर्य (नरसिंहनाथ गुरुकुल, बरगढ़, उड़ीसा), महावीर आर्य (गुरुकुल गोमत, अलीगढ़), रितेश आर्य (गुरुकुल पौन्धा, देहरादून), सक्षम आर्य (गुरुकुल गोमत, अलीगढ़), योगेश आर्य (नरसिंहनाथ गुरुकुल, बरगढ़, उड़ीसा) को प्रदान किये गये। प्रथम पुरस्कार में तीन हजार, द्वितीय पुरस्कार में दो हजार, तृतीय पुरस्कार में एक हजार तथा सान्त्वना पुरस्कार में 500–500 रुपये प्रदान किये गये। इस प्रतिस्पर्धा के निर्णायक डा. अजीत कुमार (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती (गुरुकुल पूठ), डा. नागेन्द्र मिश्र (गुरुकुल अयोध्या) रहे।

पंचम प्रतिस्पर्धा शास्त्रार्थ–विचार (वाद–विवाद) की आयोजित की गई, जिसमें 22 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। इस प्रतिस्पर्धा का विषय जीवनोपयोगी संस्कृत भाषा था। इस प्रतिस्पर्धा में संस्थागत रूप में गुरुकुल पौन्धा, देहरादून के कैलाश एवं सारांश ने प्रथम स्थान तथा कन्या गुरुकुल शिवगंज सिरोही की कृष्णा एवं मनीषा ने द्वितीय स्थान एवं तृतीय स्थान कन्या गुरुकुल नजीबाबाद की अंशु एवं सोनी ने प्राप्त किया। व्यक्तिगत पुरस्कार के रूप में शुभम् (गुरुकुल गौतमनगर, दिल्ली) ने प्रथम, दिनेश (गुरुकुल गौतमनगर, दिल्ली) ने द्वितीय तथा महीपाल (आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय माउण्ट आबू) ने तृतीय स्थान एवं विनायक (श्रीनिवास संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली) ने सान्त्वना पुरस्कार प्राप्त किया। इस प्रतिस्पर्धा के निर्णायक प्रो. महावीर अग्रवाल (प्रतिकुलपति, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार), डा. श्रीवत्स (दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली), डा. सुभाष (राजकीय महाविद्यालय तिजारा, अलवर, राजस्थान) रहे।

इस प्रतिस्पर्धा के पुरस्कार समारोह में सभी निर्णायकों तथा गुरुकुलों से आये मार्गदर्शकों को स्मृतिचिह्न देकर सम्मानित किया गया। विजेता प्रतिस्पर्धियों को मानव सेवा प्रतिष्ठान द्वारा पुरस्कार राशि प्रदान की गई। सभी प्रतिभागियों को प्रमाण–पत्र एवं आचार्य प्रणवानन्द विश्वनीड–न्यास, पौन्धा देहरादून द्वारा एक–एक बैग तथा पुस्तकें देकर पूज्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी ने आशीर्वाद दिया। श्रीमद् दयानन्द वैदिक गुरुकुल परिषद् द्वारा सभी प्रतिभागियों के लिए मार्गव्यय की व्यवस्था की गई। इस समारोह में स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, प्रो. महावीर अग्रवाल जी, पं. सत्यपाल पथिक जी, पं. धर्मपाल शास्त्री जी, डा. श्रीवत्स जी, डा. धर्मेन्द्र शास्त्री जी, श्री रामपाल शास्त्री जी, श्री चन्द्रदेव शास्त्री जी, आचार्य मनुदेव जी आदि ने आशीर्वाद प्रदान किया। प्रतिस्पर्धा के संचालक आचार्य डा. धनंजय जी ने उपस्थित प्रतिभागियों व सहयोगियों का आभार व्यक्त किया।

Delite KOM
freedom to work...
DELITE KOM LIMITED
All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary. Any infringement is liable for prosecution.
DELITE KOM LIMITED
Kukreja House, IInd Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055
Ph. : 011-46287777, 23530288, 23530290, 23611811 Fax : 23620502 Email : delite@deltekom.com

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बर्स बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लांट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे प्रतिष्ठित ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इन्डस्ट्रियल एरिया, गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष : 0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।
संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री